सुब्रह्मण्यम अय्यर

एस० ए० गोविन्दराजन

आधुनिक भारत के निर्माता

जी० सुब्रह्मण्यम अय्यर

एस० ए० गोविन्दराजन

अनुवाद : ज्ञानदेव सुन्द्रियाल

प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मंत्रालय
भारत सरकार

चैत्र 1908/अप्रैल 1986

मूल्य : रू० 10.00

निदेशक, प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, पटियाला हाउस, नई दिल्ली-110001 द्वारा प्रकाशित ।

विक्रय केन्द्र ● प्रकाशन विभाग

- सुपर बाजार (दूसरी मंजिल) कनॉट सर्कस, नई दिल्ली - 110001
- 8, इस्प्लेनेड ईस्ट, कलकत्ता - 700069
- कामर्स हाउस, करीमभाई रोड, बालार्ड पायर, बम्बई - 400038
- एल. एल. ऑडिटोरियम, 736 अन्ना सलै, मद्रास - 600002
- बिहार स्टेट को-ऑपरेटिव बैंक बिल्डिंग, अशोक राजपथ, पटना-800004
- निकट गवर्नमेंट प्रेस, प्रेस रोड, त्रिवेन्द्रम - 695001
- 10-बी, स्टेशन रोड, लखनऊ - 226019
- प्रकाशन विभाग, राज्य पुरातत्त्वीय संग्रहालय बिल्डिंग, पब्लिक गार्डन, हैदराबाद - 500004

प्रबंधक, भारत सरकार मुद्रणालय, कोयमुत्तूर द्वारा मुद्रित ।

आमुख

आधुनिक भारत के निर्माता ग्रंथमाला में जी. सुब्रह्मण्यम अय्यर की जीवनी लिखने के लिए जब मुझे आमंत्रित किया गया तो मैंने गौरव का अनुभव किया—वह 'हिन्दू' के संस्थापक व प्रथम संपादक थे, जिसके लिए लम्बी अवधि तक कार्य करने का मुझे भी सौभाग्य मिला। सुब्रह्मण्यम अय्यर 'स्वदेशमित्रन', जिसका नाम अब 'मित्रन' है, के भी संस्थापक एवं प्रथम संपादक थे। तमिल पत्रकारिता के लिए उनकी सेवाएं 'हिन्दू' के सम्पादक के रूप मे उनके पथ-निर्माणकारी कार्य से कम महत्वपूर्ण नही थी। वह बहुमुखी व्यक्तित्वसम्पन्न थे। वह शिक्षक, शिक्षाशास्त्री, अर्थशास्त्री, राजनीतिज्ञ व समाज सुधारक के रूप में देदीप्यमान रहे। अपने महान आदर्शों को चरितार्थ करने हेतु जिस नीव को रखने में उन्होने महत्वपूर्ण योगदान दिया, उस पर आगे निर्माण करने वाले महानुभाव, उन्हे प्यार से याद करते रहेगे।

इस जीवनी को तैयार करने में मुझे अनेक मित्रों की सद्भावना तथा सहायता मिली है। 'हिन्दू' और 'स्वदेश मित्रन' के संपादको ने अपनी फाइलों के अवलोकन की अनुमति देने के लिए मेरी प्रार्थना को तत्काल स्वीकार किया। 'हिन्दू' के सम्पादक ने मुझे इस पुस्तक मे छापने के लिए फोटोग्राफ दिए। भारत सेवक समाज, मद्रास के एम० आर वेंकटरामन के पास जो भी सूचना थी, उसे उन्होंने मुझे उपलब्ध करायी। सुप्रसिद्ध पत्रकार श्री आर. ए. पद्मनाभन् व मेरे पूर्व सहपाठी और अब 'इंडियन एक्सप्रेस', बम्बई के रेजिडेंट सम्पादक श्री वी. के. नरसिंहन ने भी ऐसा ही किया।

इस पुस्तक की वास्तविक डिजाइनिंग और लेखन में सहयोग के लिए 'डेकन क्रानिकल' के मुख्य संपादक, व जी० सुब्रह्मण्यम अय्यर के नाती श्री

वाराणसी राममूर्ति का, जो अब 'हिन्दू' स्टाफ के सदस्य हैं और अपनी पत्नी डॉ० अलामेलु गोविन्दराजन का मैं आभारी हूं। साथ ही 'हिन्दू' के श्री बाला-सुब्रह्मण्यम तथा उस्मानिया विश्वविद्यालय, हैदराबाद के श्री मुरली-धर पोद्दार को भी धन्यवाद देता हू, जिन्होंने प्रेस के लिए पाण्डुलिपि तैयार करने में सहयोग दिया।

मैंने ऐनी बेसेंट के 'हाउ इडिया फॉट फार फ्रीडम' तथा डॉ० पट्टाभि सीतारमैया के 'हिस्ट्री आफ दि इडियन नेशनल कांग्रेस' जैसी राष्ट्रीय आदोलन की मानक पुस्तकों का अवलोकन किया। मैंने बिपिन चन्द्र सेन के 'राइज एंड ग्रोथ आफ इकानामिक नेशनलिज्म इन इडिया' और 'इकानामिक पालिसीज आफ इंडियन नेशनल लीडरशिप—1880–1905' पुस्तक को अत्यत उपयोगी एवं रोचक पाया। श्री जे. नटराजन की 'हिस्ट्री आफ इडियन जर्नलिज्म'—जो भारतीय प्रेस आयोग की रिपोर्ट के एक भाग के रूप में प्रकाशित हुई—से भारतीय प्रेस के प्रारभिक दिनो मे रुचि रखनेवालों को अध्ययन करने में सहयोग मिलेगा। मैंने श्री एस. नटराजन की 'हिस्ट्री आफ दि प्रेस इन इडिया' और श्री एस् पी. त्यागराजन की 'हिस्ट्री आफ इंडियन जर्नलिज्म' का भी अनुशीलन किया है।

श्री के. सुब्बाराव की 'रिवाइव्ड मीमोरीज' नामक पुस्तक हमे जी. सुब्रह्मण्यम अय्यर के 'हिन्दू' के संपादक के रूप में कार्य करने सबधी अनेक जानकारी प्रदान करती है। सुब्रह्मण्यम के जीवन-काल के दौरान प्रकाशित (1) श्री ह्यावदन राव (गणेश एण्ड कं०) द्वारा लिखित 'जी० सुब्रह्मण्यम अय्यर' तथा (2) गुरुमलाई सुन्दरम् पिल्लई द्वारा तमिल में लिखी गई 'श्री जी० सुब्रह्मण्यम' दो पुस्तको को मैंने अत्यंत उपयोगी पाया।

अपनी ओर से यह दावा करना उचित न होगा कि मैंने अपनी इस पुस्तक में सुब्रह्मण्यम अय्यर द्वारा प्राप्त उपलब्धियों या प्राप्त करने के उनके प्रयासो के प्रति न्याय किया है। पूर्ण व निश्चित जीवन-चरित्र लिखे जाने से पूर्व कई घटनाओं पर अधिक प्रकाश डालने की आवश्य-

कता है। निस्सदेह, उन्होने सार्वजनिक वक्तव्य दिए और बहुत कुछ लिखा। यद्यपि हम उनकी व्यक्तिगत प्रकृति के विषय में और अधिक जान सकते थे, किन्तु वह अधिक समय तक जीवित न रहे और उनके साथ काम करने वाले और उनके जीवनकाल के दौरान कार्यरत महान लोगो की गिनती दिन-प्रतिदिन घटती जा रही है। फिर भी मुझे आशा है कि यह पुस्तक एक महान भारतीय के जीवन-दृष्टांत के प्रति जनता की रुचि जगाएगी और कोई अधिक योग्य व अधिक सौभाग्यशाली व्यक्ति शीघ्र ही सुब्रह्मण्यम अय्यर के व्यापक जीवन पर लिखने का कार्य प्रारम्भ करेगा।

एस० ए० गोविन्दराजन

इस ग्रंथमाला के बारे में

ग्रंथमाला का उद्देश्य भारत के उन गिने-चुने सुप्रतिष्ठित व्यक्तियों की जीवनी प्रकाशित करना है, जो हमारे राष्ट्रीय पुनर्जागरण तथा स्वाधीनता सग्राम के प्रमुख अंग रहे हैं।

वर्तमान तथा भावी पीढ़ियो को इन महान हस्तियों का यत्किंचित परिचय प्राप्त कराना अनिवार्य है। खेद है कि कुछ मामलों को छोड़कर इन महापुरुषों की कोई अधिकारिक जीवनियां उपलब्ध नही है। इस कमी को पूरा करने के लिए 'आधुनिक भारत के निर्माता' ग्रथमाला की योजना बनाई गयी है। इसमें अपने विषय के सुविज्ञ सक्षम व्यक्तियों से देश के महान नेताओं की लघु आकार की सरल व छोटी जीवनियां लिखवा कर प्रकाशित करने का प्रस्ताव है। इनमें व्यापक अध्ययन सामग्री या जीवन चरित्र का आग्रह नही है।

चाहने पर भी, इन जीवनियों को वर्णक्रम मे प्रकाशित करना सभव नही है। इन जीवनियो को लिखने का कार्य पूर्णत सक्षम व साधन-सम्पन्न व्यक्तियों को सौंपा गया है। संभव है, व्यावहारिक कारणो से इसमें ऐतिहासिक काल-क्रम का पालन न किया गया हो, फिर भी आशा है कि इस ग्रंथमाला में शीघ्र ही सभी सुप्रतिष्ठित व्यक्तियों की जीवनियों का समावेश होगा।

इस ग्रंथमाला के प्रधान सम्पादक श्री आर.० आर० दिवाकर है।

डॉ० श्याम सिंह शशि

निदेशक

अनुक्रम

2—4 M of I & B 84

अन्तःक्षोभ का समय

उन्नीसवी सदी का अतिम चतुर्थांश भारत मे हलचल का समय था। देश ने अपने मध्ययुगीन श्रृगार की बची-खुची बातो को त्यागने के प्रयास शुरू कर दिये थे। एक नये कुलीन वर्ग का उदय हो रहा था जिसमे बम्बई, कलकत्ता और मद्रास विश्वविद्यालय के स्नातक शामिल थे। सामती जमींदार-कुलीन वर्ग, जो 1857 के विद्रोह के उपरांत अग्रेज शासकों की आखों में खटक रहे थे, से नेतृत्व का भार उन्होने अपने हाथो मे ले लिया था। जी० सुब्रह्मण्यम अय्यर जो इस पुस्तक के नायक है; मध्यवर्गीय पृष्ठभूमि वाले इसी बुद्धिजीवी कुलीन वर्ग से सबधित थे।

सामंत वर्ग से शक्ति सतुलन बनाये रखने के लिए अंग्रेजो ने, जिसमे सरकारी और गैरसरकारी दोनो सम्मिलित थे, पाश्चात्य शिक्षा प्राप्त इस नयी पीढ़ी को प्रोत्साहित किया, किन्तु विश्वविद्यालयों के इस युवा वर्ग ने विदेशी शासको की कथनी और करनी के बीच की खाई को जल्दी ही पहचान लिया। वे कागजो मे तो भारतीय साम्राज्य के सम्माननीय नागरिक थे, किन्तु व्यवहार में वस्तुत उनका दर्जा उनके अपने ही देश में दूसरी श्रेणी के नागरिकों जैसा था। शिक्षित वर्ग ने देखा कि योग्यताओं के बावजूद प्रशासन में उच्च पदों पर नियुक्ति के मामले में उनके साथ भेदभाव किया जाता है और समय-समय पर जारी इस रॉयल घोषण का भी उल्लघन किया जाता है कि सभी कार्यालय इस देश के सभी सुयोग्य व्यक्तियो के लिए खुले है। शिक्षित वर्गों के अन्दर उत्पन्न असतोष की इसी भावना से ही देश में एक सामूहिक राजनैतिक आदोलन का सूत्रपात हुआ, जिसकी चरम परिणति भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस की स्थापना के रूप में हुई।

इस अवधि के दौरान बहुतेरे राजनैतिक आदोलन भी नही हुए, क्योंकि यह अधिकाशतः याचिकाओं और प्रस्तावों का युग था। नेताओं को पूर्ण आशा थी कि एक बार यहां की वास्तविक स्थिति जान लेने के

उपरात अंग्रेज सभी बातों को ठीक कर देंगे और भारतीयों के प्रति न्याय करेंगे। भारत की गतिविधियों को तार द्वारा इग्लैंड को सूचित करते रहने के लिए भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के सस्थापक एलन ऑक्टेवियन ह्यूम ने भारतीय टेलीग्राफ यूनियन की स्थापना की। अंग्रेज राजनीतिज्ञो मे भारत मित्र-विहीन न था। जॉन ब्राइट और चार्ल्स ब्रैडला जैसे पार्लियामेंट के सदस्य भारत के मामलो मे गहरी रुचि लेते थे। ग्लैड्स्टन भी, जो बाद में इंग्लैंड का प्रधानमत्री बना, भारत का भला चाहने वालो में से एक था।

कांग्रेस, जिसके सत्र 1885 से नियमित रूप से चलते आ रहे थे, लोक व्यवस्थाओं का बडा समाशोधन गृह थी। यह प्राय: सरकार के अच्छे-बुरे कार्यों के सबंध मे प्रस्ताव पारित करती रहती थी। ध्यान देने योग्य रोचक बात यह है कि ह्यूम का अभिप्राय इसे राजनैतिक सस्था बनाना नही था, बल्कि वह चाहता था कि काग्रेस अपने आपको सामाजिक समस्याओं तक ही सीमित रखे। काफी मजे की बात है कि वाइसराय लॉर्ड डफरिन चाहता था कि राजनैतिक मामलो को कलकत्ता भारतीय एसोशियेसन, बम्बई प्रेसीडेसी एसोशियेसन और मद्रास की महाजन सभा जैसी प्रातीय सभाओ के हाथों मे छोडने की अपेक्षा काग्रेस को स्वय निपटाना चाहिए। वाइसराय ने काग्रेस के लिए इग्लैंड में महारानी के विपक्ष की भूमिका पर विचार किया। लेकिन काग्रेस के सस्थापक ह्यूम का दूसरा ही विचार था; वह काग्रेस को अंग्रेजों की सुरक्षा का साधन बनाना चाहते थे जिससे जनता के कष्टो से सदेहात्मक तत्व लाभ न उठा सके और फिर से 1857 जैसा विद्रोह न भडक उठे।

शुरू मे कांग्रेस को अंग्रेजों की संरक्षता प्राप्त थी और संगठन के सदस्य यह सोचकर आपस में ही विचारों का आदान-प्रदान करते थे कि अंग्रेजी शासन एक ईश्वरीय देन है। किन्तु जैसे ही इसकी मागे परिणाम व तीव्रता में बढ़ती गई, इसके प्रति अंग्रेजो की रुचि ठंडी पडने लगी और जो अधिकारी कांग्रेस-सत्रों में पहले उपस्थित होते थे, उन्हे आदेश दिये गए कि वे अपने आपको इससे अलग रखे। अधिकारियो ने अपनी ओर से पूरी कोशिश की कि 1888 में इलाहाबाद में होने

वाला सत्र न हो। वे केवल असफल ही नही हुए, बल्कि इससे उनकी निराशा और भी बढी, क्योंकि एक अंग्रेज जॉर्ज यूल ने इस सम्मेलन की अध्यक्षता की थी।

1885 मे बम्बई में हुई अपनी पहली बैठक मे कांग्रेस ने रॉयल कमीशन की नियुक्ति, जिसमें भारतीयों का समुचित प्रतिनिधित्व रहे, की माग की थी, ताकि भारतीय प्रशासन की स्थितियों का अवलोकन किया जा सके। यह प्रस्ताव सुब्रह्मण्यम अय्यर ने रखा था। काग्रेस ने इडिया कौसिल का परिमार्जन करने को भी कहा। यह बताया गया कि कौसिल में सेवानिवृत्त ऐंग्लो-इडियन अधिकारी हैं, जो यथास्थिति बनाये रखने के इच्छुक हैं। इसलिए भारत-मत्री को सलाह देने के लिए वे सक्षम नही है। सुब्रह्मण्यम अय्यर ने खुले आम कहा कि भारत सरकार की ओर से कौसिल में भारत-मंत्री से की गई अपील ऐसी थी जैसे "फिलिप ने पिया और फिलिप को पिलाया" (अर्थात अधा बाटे रेवडी आप आप को देय)। सरकार से अनुरोध किया गया कि वह भारतीय सिविल सर्विस के लिए इंग्लैंड और भारत मे एक साथ परीक्षा आयोजित करे और उम्मीदवारों की आयु सीमा 19 वर्ष से बढ़ाकर 23 वर्ष कर दे। भारतीय सेवा मे पदाभिलाषियों के मार्ग मे रुकावटे बढ़ाने के लिए आयु सीमा जानबूझ कर ही कम की गई थी। काग्रेस ने शस्त्र अधिनियम के उन्मूलन की भी माग की, जिसके अनुसार आत्मरक्षा के लिए भी जनता को शस्त्र रखने का निषेध था। इसमे यह भी कहा गया कि अधिकारी सवर्ग हेतु भारतीयों को प्रशिक्षण देने के निमित्त मिलिटरी कालेज खोले जाएं। सेना के व्यय में कमी करने, विधान परिषदो मे भारतीयों को अधिक प्रतिनिधित्व देने और न्याय-पालिका को कार्यपालिका से अलग करने के अनुरोध कांग्रेस के ठोस वार्षिक प्रस्ताव होते थे।

प्रस्तावित मागो के स्वरूप से स्पष्ट होता है कि काग्रेस की सभी मागें भारतीयों को अधिक-से-अधिक सुअवसर दिलाने के सबंध मे होती थीं। वह नही चाहती थी कि अग्रेज भारत को छोड कर चले जाए। वास्तव मे भावी कांग्रेस ने क्राउन के प्रति वफादारी के विरोध का प्रस्ताव

पाम किया। प्रारंभिक स्तरों पर सगठन के अधिकांश सदस्य पत्रकार, शिक्षक, वकील, डॉक्टर और व्यापारी जैसे बुद्धिजीवी व्यावसायिक वर्गों से आते थे। एक समय ऐसा था जब काग्रेस का सदस्य बनने के लिए अग्रेजी के कामचलाऊ ज्ञान की शर्त रखी जाती थी। तदनन्तर वर्षों मे इसने व्यापक जनाधार और आंदोलनात्मक रूप धारण कर लिया था।

राजनैतिक मुक्ति की माग उठने से पूर्व सामाजिक प्रगति का एक सुदृढ आदोलन चला। बगाल इस आदोलन का गढ था और इसका प्रारम्भ राजा राममोहन राय—जिनका देहांत 1833 मे हो गया था—के प्रेरणादायक नेतृत्व में हुआ। राममोहन राय के कुछ आदर्शों का महत्व लार्ड विलियम बेंटिक के शानदार शासनकाल मे समझा गया। राममोहन राय ने सती प्रथा (विधवा का अपने पति के साथ चिता पर जलना) और बालविवाह जैसी बुराइयों का विरोध किया और विधवा पुनर्विवाह का विरोध जैसी प्रचलित कुप्रथाओं पर दृढतापूर्वक अपना ध्यान केन्द्रित किया। उन्होंने समझ लिया था कि भारत की मुक्ति तब तक सभव नही, जब तक वह पाश्चात्य शिक्षा से लाभान्वित न हो। सुधार के धर्मयुद्ध मे उन्हे अनेक बाधाओ को पार करना पड़ा। कुछ अग्रेजो ने महसूस किया कि विज्ञान और प्रौद्योगिकी के साथ अंग्रेजी की शिक्षा से अन्तत ब्रिटिश राजनैतिक प्रभाव का लोप हो जाएगा। दूसरी ओर भारत के ऐसे रूढिवादी तत्व थे, जो कहते थे कि सभी ज्ञातव्य बाते वेदों में ही हैं और भारत को पश्चिम से कुछ भी नही सीखना है। अत में राजा राममोहन राय की जीत हुई। उनके महान मार्ग-दर्शन का ही फल था कि 1858 मे देश मे तीन विश्वविद्यालयो की स्थापना हुई।

उनके द्वारा सस्थापित ब्रह्म समाज एक सामाजिक-राजनैतिक सगठन था, जो अपने स्वरूप से ही धर्म-विरोधी चरित्र का था। यह पाश्चात्य साम्राज्य की ओर काफी झुकाव रखता था और कई बार सम्मानित कार्यों पर भी इसकी भृकुटी तन जाती थी। इसका उद्देश्य ऐसे सार्वभौम चर्च की स्थापना करना था, जो धर्म के बाहरी आडम्बरों की कम पर-वाह करे और जाति-पांति के भेदभाव को मिटा डाले। राममोहन रा

की मृत्यु के बाद आदोलन को काफी धक्का पहुचा। फिर भी इसे केशवचन्द्र सेन के व्यक्तित्व मे एक नया जीवन मिला, उनके कुशल नेतृत्व में यह ब्रह्म समाज बगाली शिक्षित युवावर्ग मे बहुत लोकप्रिय हो गया, क्योंकि इस आदोलन के आदर्श बहुत कुछ वही थे, जो उन्हे कालेजो मे पढाये जाते थे। केशवचन्द्र सेन की अनेक उपलब्धियों मे से एक उपलब्धि थी सिविल विवाह अधिनियम पारित करवाना, जिसके अनुसार बिना पुरोहितों की मदद के विवाह सम्पन्न हो सकता था। केशवचन्द्र सेन ने इग्लैड का दौरा किया और ब्रह्म समाज की मिशनरिया इसके सदेश को भारत के विभिन्न भागो मे ले गई।

ब्रह्म समाज ने भारत के अन्य भागों मे प्रगतिशील तत्वो के दिलो को एक उत्तरदायी सूत्र मे बाधा। पूना मे प्रार्थना समाज ने इसके आदर्शो का प्रचार किया; पश्चिमी भारत के प्रसिद्ध नेताओं मे से एक एम० जी० रानडे, समाज की जीती जागती चेतना थे। गण्यमान्य पारसी लेखक बी० एम० मलाबारी ने बम्बई में समाज सुधार के प्रचार हेतु अपनी लेखनी चलाई।

कदुकुडी वीरेशलिगम, मद्रास प्रेसीडेसी के समाज सुधार आंदोलन के अग्रणी थे। वह जवान विधवाओ को उनके लिए सुयोग्य वर खोजने मे मदद किया करते थे। उन्होने बालविवाह का भी विरोध किया सुब्रह्मण्यम अय्यर ने तो इन आदर्शो के प्रचार के लिए 'हिन्दू' में और बाद मे 'स्वदेशमित्रन' मे भी स्तम्भ खोल दिए थे। उन्होने अपने एक साथी को भी एक साप्ताहिक पत्र 'इडियन सोशल रिफार्मर' शुरू करने मे मदद की, जो जल्दी ही प्रेसीडेसी मे आदोलन का प्रवक्ता बन गया। सुब्रह्मण्यम अय्यर ने अपनी पुत्री के पति की मृत्यु के उपरात उसकी दूसरी शादी करके समाज सुधार ने एक व्यावहारिक उदाहरण उपस्थित किया।

इन प्रगतिशील सामाजिक आदर्शो को सभी नही मानते थे। ये ऐसे व्यक्ति थे जिनका पूर्णतः या अशतः भिन्न उद्देश्य था। आर्य समाज एक ऐसा ही आदोलन था, जिसके अनुयायी बहुत बडी संख्या

मे थे और जिसने समाज सुधार के मामले मे अपने अनुयायियों को स्वतन्त्रता दे दी थी, जबकि वह साथ-साथ वेदों की अटल सत्यता पर भी जोर देता था। स्वामी दयानन्द सरस्वती द्वारा शुरू किया गया। आर्य समाज पश्चिमी और उत्तरी भारत मे बहुत लोकप्रिय हुआ। मैडम ब्लेवत्स्की और कर्नल ऑलकाट ने, 'थियोसोफिकल सोसायटी' की स्थापना की। थियोसोफिस्ट विश्वास करते हैं कि भारत प्राचीन ज्ञान का भडार है और वेदो व पुराणो मे बहुत-सा गूढ ज्ञान भरा हुआ है। इस आंदोलन ने हिन्दुओ की विचलित भावनाओ को शात किया और उनकी तेजस्विता के पुनर्स्थापन मे काफी सहायता की। लगभग उसी समय रामकृष्ण परमहस और स्वामी विवेकानन्द ने भी प्रेम और समाज सेवा सबधी अपने दिव्य संदेश दिये।

जनता की आर्थिक दशा काफी खराब थी। उस समय के एक भारतीय नेता का कहना था कि अग्रेज भारत को आनन्ददायक शिकारगाह समझते है। हर साल यहां का काफी धन इग्लैंड ले जाया जाता था। भारत में बहुत कम उद्योग थे। अग्रेज देश को कच्चे माल का—जो उन्हें सस्ते में मिल जाता था—लाभदायक स्रोत मानते थे। वहा तैयार किए गए माल की, जिसे वे पुन निर्यातित करते थे, अच्छी कीमत मिल जाती थी। यह उल्लेखनीय है कि 1757 में बगाल मे अग्रेजो की जीत बहुत कुछ उस समय हुई, जब इग्लैंड मे औद्योगिक क्रांति शुरू हो रही थी और चतुर अग्रेज व्यापारी अपने उद्योगो को चलाने के लिए कच्चे माल के नये स्रोतों का शोषण करने मे पीछे नही रहे।

1857 की क्रांति के पश्चात् भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ जूट उद्योग के बुरे दिन आ गए, क्योंकि शिल्पकारो के भूतपूर्व कुलीन सरक्षक स्वंय नष्ट हो गए थे, यहा तक कि भारत में प्रसिद्ध वस्त्र उद्योग को भी लकाशायर उद्योग से गठबधन करना पडा।

उस समय जगल का कानून जैसे द्वेषजनक कानून बने हुए थे, जिनके अन्तर्गत खेतिहरो को जंगल की चीजों के प्रयोग की मनाही की गई थी। पहले से ही इस गरीब देश को भारत में रखी अंग्रेजो की सेना

के लिए भारी धन देना पड़ता था। भारतीयों को स्वतंत्र रूप से वॉलिंटियर कोरों में भी भर्ती नही होने दिया जाता था। उनमें से केवल कुछ ही को भर्ती किया जाता था। इंग्लैंड मे एक अंग्रेज सैनिक पर वर्ष भर मे 255 रुपये खर्च आता था। एक बार समुद्र पार करके भारत में प्रवेश करते ही उसके अनुपालन पर 775 रु० वार्षिक खर्च हो जाता था।

यह पुनर्शिक्षाधीन अवधि भारत के असतोष का शीतकाल था और लॉर्ड डफरिन ने भारत मे कांग्रेस को राजनीतिक गतिविधियो मे भाग लेने की सलाह देकर, भारत मे ब्रिटिश साम्राज्य को सचेत कर दिया। 1857 मे अंग्रेजों से शस्त्रों के बल पर स्वतंत्रता छीन लेने का प्रयास किया गया और सामंत वर्गों, जिन्होने इसका नेतृत्व किया, को नष्ट कर दिया गया। नेताओं का एक नया वर्ग पैदा हो गया था, जिसने अंग्रेजो से अपनी बुद्धिमत्ता से संघर्ष किया। सुब्रह्मण्यम अय्यर जैसे राजनीति के लेखको ने न्याय की रक्षा तथा अंग्रेजो द्वारा स्वदेश-बंधुओं के साथ अच्छे बर्ताव करने के संबंध मे लेखनी उठायी। 1892 मे दादा भाई नौरोजी के 'हाउस आफ कामन्स' के लिए चुने जाने से स्पष्टतः यह सिद्ध हो गया कि भारतीय दिए गए अवसर को कहीं भी अच्छी तरह निभा सकते थे। यह राजनैतिक-मुक्ति के लिए संघर्ष मे भारत के लिए एक उत्साहवर्धक सिद्ध हुई।

प्रारम्भिक जीवन : छात्र एवं अध्यापक

जी० सुब्रह्मण्यम अय्यर का जन्म 19 जनवरी 1855 को मद्रास प्रात, जिसे अब तमिलनाडु कहते हैं, के जिला तजाबुर के तिरुवैयर मे हुआ था। तिरुवैयर कावेरी के तट पर स्थित है तथा दक्षिण भारत के पवित्र स्थानों मे से एक हैं। उनके पिता गणपति अय्यर मध्यवर्ग के थे, वह एडवोकेट थे। उनके मुसिफ (जज),—जिनके समक्ष वह मामलो पर बहस करते थे—उनके मुवक्किल तथा मित्र उनका बहुत आदर करते थे। वह आदर्श, धार्मिक और परम्परावादी थे और उनके इन गुणो का स्पष्ट प्रभाव युवक सुब्रह्मण्यम अय्यर के मन पर पडना स्वाभाविक था। कालातर मे, सुब्रह्मण्यम अय्यर ने अपने धर्म परिवर्तन—जैसा कि उनके कुछ मित्रो ने उन्हे सलाह दी थी—की अपेक्षा हिन्दू समाज को उसी के आवेष्टन के भीतर उसे सुधारने के प्रयास किए।

सुब्रह्मण्यम अय्यर—जो अपने परिवार के सात पुत्रों व एक पुत्री मे से एक थे—ने अपनी प्रारभिक शिक्षा तिरुवैयर तालुक स्कूल मे की। तत्पश्चात वह एस० पी० जी० मिशन स्कूल तजावुर मे पढने गए और 1869 मे मद्रास विश्वविद्यालय की मैट्रिकुलेशन परीक्षा उत्तीर्ण की। दो वर्ष बाद उन्होने एस० पी० जी० कालेज मे प्रथम कला परीक्षा पास की। यह कालेज जो अब पीटर्स कालेज के नाम से जाना जाता है, अब हाई स्कूल है, किन्तु इसने तंजावूर मे शिक्षा प्रसार हेतु बहुत सेवा की है। सुब्रह्मण्यम अय्यर को सुप्रसिद्ध शिक्षकों मार्श व क्रिचटन और श्रीनिवास राघव आयंगर के अधीन शिक्षा प्राप्त करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। वे तीनो उच्च कोटि के विद्वान एव महान चरित्रवान व्यक्ति थे। यह भी उल्लेखनीय है कि श्रीनिवास राघव आयंगर, एस० कस्तूरी रगा आयगर, जिन्होंने 'हिन्दू' का सम्पादक बनने के लिए सुब्रह्मण्यम अय्यर के पदचिन्हो का अनुसरण किया, के बडे भाई थे।

दुर्भाग्यवश, सुब्रह्मण्यम ने 13 वर्ष की अल्पायु मे ही अपने पिता को खो दिया। उनकी मा धमम्बिल ने ध्यानपूर्वक परिवार की देखभाल

की तथा इसे वित्तीय समस्याओं से छुटकारा दिलाने मे मदद की। मीनाक्षी से प्रसन्नतापूर्वक विवाह करने के उपरात वह बिना किसी संकोच के 1874 मे नॉर्मल स्कूल (आज का टीचर्स कालेज) मे शिक्षक के प्रशिक्षण के निमित्त मद्रास गये। वहा उन्होंने अच्छा कार्य किया और प्रधानाध्यापक जॉर्ज वाइकिल, जिन्होंने विद्यालयो के निरीक्षक के रूप में कार्य किया और बाद मे मद्रास विश्वविद्यालय के रजिस्ट्रार रहे, पर अच्छा प्रभाव डाला। प्रशिक्षण के उपरात सुब्रह्मण्यम अय्यर 1875 मे चर्च ऑफ स्कॉटलैंड मिशन इंस्टीट्यूट मे 45 रु० प्रतिमाह के वेतन पर शिक्षक बने। उन्होंने वहा 1877 तक कार्य किया। तदुपरान्त उन्होने पचैप्पा कालेज मे कार्य किया। इस कालेज में शिक्षक के रूप मे कार्य करते हुए उन्होने स्वतन्त्र विद्यार्थी के रूप मे बी० ए० की डिग्री परीक्षा उत्तीर्ण की। 25 वर्ष से कम आयु मे उन्हे ऐंग्लोवर्नाक्युलर स्कूल (इस समय हिन्दू हाई स्कूल, त्रिप्लिकेन) का प्रधानाध्यापक बनाया जाना ही यह प्रमाणित करता है कि उनके अदर कितनी योग्यता एवं ओज-स्विता थी।

सुब्रह्मण्यम अय्यर अध्यापन कार्य पसंद करते थे तथा चाहते थे कि किसी को भी शिक्षा से वंचित न रखा जाए। समाज-सुधार की उत्कट इच्छा, जो बाद में उनके जीवन मे प्रत्यक्ष हुई, पहले ही उनके विचारो और भावनाओ को आदोलित कर रही थी। उनके उदार दृष्टिकोण ने सभी सांप्रदायिक एव जाति सबधी वरीयताओं को अस्वीकार कर दिया। वह सुयोग्य और जरूरतमन्दो को नि शुल्क शिक्षा देने के इच्छुक थे। 1888 मे त्रिप्लिकेन मे आर्यन हाई स्कूल स्थापित करने में इनका प्रमुख हाथ था। उस स्कूल में जातिगत भेदभाव के बिना हिन्दू और मुसलमानों को प्रवेश मिलता था। दिन की कक्षाओ मे उपस्थित न हो सकने वाले छात्रो के लिए उन्होंने रात्रि स्कूल शुरू किए, वह युवापीढी के नैतिक स्तर को उठाने और उनके सदाचरण पर सबसे अधिक ध्यान देते थे। यह बात 25 नवम्बर 1892 के 'हिन्दू' मे छपी उनकी नीचे लिखी अपील मे देखी जा सकती है —

आर्यन हाई स्कूल, त्रिप्लिकेन से लगा एक पुस्तकालय व अध्ययन कक्ष है। सस्थान के छात्र एव शिक्षक इसे प्रयोग में ला सकते हैं।

आज के युग में पुस्तकालय खोलना एवं उसके लिए निधि का संचय करना दान का सर्वोत्तम दिव्य रूप है। अत: उक्त पुस्तकालय का प्रबंधक बडे ही विश्वास से उदार हृदय वाले दानी महानुभावो से अपील करता है कि वे पुस्तकें या धन भेजकर पुस्तकालय को समृद्ध बनाने में अपना योगदान दे। पुस्तको के पार्सलो पर लगने वाला डाक-व्यय प्रबधक स्वय वहन करेगा।

जिसके लिए यह अपील की गई है, वह संस्थान विगत पाच वर्षों से चलाया जा रहा है। आर्यन स्कूल में, प्रसीडेसी के स्कूलों के निर्धारित पाठ्यक्रम के अलावा बिना किसी भेदभाव के नैतिक व धार्मिक शिक्षा दी जाती है। यहा अपेक्षित उपकरण व सयन्त्र से सुसज्जित व्यायामशाला मे शारीरिक शिक्षा दी जाती है। इसे मद्रास शिक्षा विभाग द्वारा मान्यता प्रदान की गई है। इसमे अत्यधिक अनुपात में विद्यार्थियो को मुफ्त शिक्षा दी जाती है या आधी फीस ली जाती है। विद्यालय को दी गई सहायता से निर्धन छात्रों को नि:शुल्क शिक्षा दी जा सकेगी। पुस्तके तथा दानराशि इत्यादि, जी० सुब्रह्मण्यम अय्यर, प्रबंधक आर्यन हाई स्कूल त्रिप्लिकेन, मद्रास द्वारा सधन्यवाद ग्रहण की जाएगी।

18 मई, 1891 को स्टाफ के एक सदस्य के विदाई समारोह में सुब्रह्मण्यम अय्यर ने कहा कि वह लगभग 15 वर्षों से अध्यापक रहे हैं। यद्यपि उन्होंने स्पष्टत: दूसरा व्यवसाय अपना लिया है, फिर भी वह शिक्षा कार्य मे रुचि लेते रहते हैं, क्योंकि एक पत्रकार के रूप में उनका कर्त्तव्य अपने देशवासियों के हृदय मे ज्ञान व जागरूकता उत्पन्न करना था।

उन्होंने आर्यन स्कूल ईसाई मिशनरी को सौंप दिया और उनसे यह आश्वासन प्राप्त किया कि वे उसे उन व्यापक सिद्धान्तों पर चलाते रहेंगे, जिन्हे पहले व्यवहार मे लाया जा चुका है। अब यह कैलेट हाई स्कूल के नाम से जाना जाता है। इस प्रकार त्रिप्लिकेन में दो प्रारंभिक शिक्षा संस्थान सुब्रह्मण्यम अय्यर के शिक्षाविद् के रूप में किये गए कार्य के परिचायक रहेंगे।

पचयप्पा के कालेज मे अध्यापन कार्य करने के दौरान सुब्रह्मण्यम अय्यर का परिचय एम० वी० राघवाचारियर, जो बी० ए० कक्षा के छात्र थे, से हुआ और शीघ्र ही यह परिचय गहरी मित्रता मे परिणत हो गया। आगे चलकर उन्होंने साथ मिलकर 'हिन्दू' पत्र का श्रीगणेश किया।

'हिन्दू' की संस्थापना

भारतीय प्रेस के इतिहास मे 20 सितबर उसकी वर्षगांठ का महत्व-पूर्ण दिन है। यह सितम्बर 20, 1878 ही था, जिस दिन मद्रास नगर के मिन्ट स्ट्रीट के श्रीनिधि प्रेस से 'हिन्दू' पत्र का शुभारम्भ हुआ। साप्ताहिक पत्र के रूप में उसका स्थापन 'ट्रिप्लिकेन लिटरेरी सोसाइटी' के छ: उत्साही नवयुवक सदस्यो ने किया। वे थे- जी० सुब्रह्मण्यम अय्यर, एम० वी० राघवाचारियर, टी० टी० रंगा चारियर, पी० वी० रंगा चारियर, डी० केशवराव पन, एन० सुब्बाराव पंतुलु। ये नवयुवक इस पत्र को लाभ प्राप्ति के साधन की अपेक्षा मिशनरी प्रयास मानते थे। वे देश के सामने उत्पन्न महत्वपूर्ण समस्याओं पर जनमत जुटाना चाहते थे। इसके प्रथम प्रकाशन में लिखा पूरा सम्पादकीय इस पुस्तक के अंत मे दिया गया है, जिससे सुब्रह्मण्यम अय्यर के विचारो एव काम करने के ढंग का पता चलता है। जल्दी ही इस पत्र के संचालन की पूरी जिम्मेदारी उनके और वी० राघवचारियर के कंधों पर आ गई। वह सम्पादक थे, जबकि वी० राघवचारियर प्रबंध की देखरेख करते थे।

पत्र का शुभारम्भ करने वाले युवको का दृढ साहस प्रशंसनीय था। उनके पास बहुत कम पूंजी और पत्र-संचालन का कम अनुभव था। मद्रास दो पत्रो का उत्थान व पतन देख चुका था—'क्रिसेंट' जो स्वदेशीय एसोशियेशन के अंग के रूप मे और 'नेटिव पब्लिक ओपीनियन' जिसका बाद में 'मद्रासी' में विलय हो गया था, शुरू किए गये थे। 'मद्रासी' की संस्थापना ए० रामचन्द्र अय्यर, जो बाद मे मैसूर के मुख्य न्यायाधीश बने, ने अन्य लोगो की तरह भारतीय जनता के हितों और विदेशी स्वार्थों के आक्रमणो से उन्हें बचाने के उद्देश्य से की। कुछ समय बाद यह दूसरों के हाथों मे चला गया और इसका राजनीतिक रूप ही बदल गया।

'हिन्दू' के रजत जयंती संस्करण मे प्रकाशित रिपोर्ट में वी० राघवाचारियर ने लिखा –

"हम सभी अभी-अभी कालेज से निकले थे, इसलिए कहने को

को भी पूंजी" नही थी। इनमे से दो—सुब्रह्मण्यम अय्यर और मैंने जीवन मे स्कूल शिक्षक के रूप मे प्रवेश किया और अन्य तीन कानून की उपाधि पाने के लिए कानून की पढ़ाई कर रहे थे। इसलिए उन्हें इस कार्य मे ठोस सहयोग देने के लिए मुश्किल से समय मिल पाता था। अत श्री सुब्रह्मण्यम अय्यर और मेरे ऊपर कार्य का भारी बोझ आ पडा, इसलिये हमारे लिए साप्ताहिक पत्र से अधिक कुछ भी शुरू करना सभव न था।

"ओह! मुझे याद है कि भारत के सभी भागों से उत्साहवर्धक और बधाई पत्र आये थे। फिर भी मैं यह उल्लेख किए बिना नही रहूंगा कि हमें अनेक शुभाकाक्षी व्यक्तियो, जिन्हे इस उद्यम से अनेक बुरे परिणाम निकलने की आशका थी, की निराशाजनक टिप्पणियां भी मिली। वे समझते थे कि पत्रकार का व्यवसाय अत्यत जोखिम का कार्य है और उस समय प्रेसीडेंसी की हालत ऐसी थी कि उससे कोई वित्तीय सहायता नही मिल सकती थी, 'हिन्दू' का भविष्य भी 'नेटिव पब्लिक ओपीनियन' और 'मद्रासी' के भाग्य की तरह समझा जा रहा था .., किन्तु उत्साह भंग नही हुआ, हमने आगे काम जारी रखा।

"हिन्दू के शुरुआत से लेकर जब तक वह समाचारपत्र से सबंधित रहे, सम्पादक ही रहे और उन्होंने बड़े ही दृढ़ सकल्प और अदम्य साहस से उसका संचालन किया। उनके इस महान कार्य मे सर्वश्री सी० करुणाकर मेनन, के० सुब्बा राव और के० नटराज अय्यर ने सहयोग प्रदान किय जिनकी हार्दिक कर्त्तव्यनिष्ठा प्रशंसनीय थी। उन्होने अपनी उच्च प्रतिभा, महान योग्यता और राजनीतिक, आर्थिक, समस्याओं आदि के गहरे ज्ञान द्वारा प्रशासन की बुराइयों को सुधारा और अपने देशवासियो के अदर लोक-कर्तव्य की भावना पैदा की।"

वस्तुत: सम्पादक सुब्रह्मण्यम अय्यर जो लोगों के बीच जाने जाते थे, 'हिन्दू' के स्तंभों के माध्यम से दो दशकों तक दक्षिण भारत में जनमत को ढालते रहे तथा वर्षों उपरांत वह 'हिन्दू' के प्रारम्भिक चरणो मे आनेवाली उन बाधाओं, जिन्हे उन्होने और उनके साथियों ने पार किया था, का लेखबद्ध वर्णन करने का लोभ सवरण न कर सके। उन्होंने

कहा, "जब मैं जनवरी 1874 में आगे पढ़ाई करने मद्रास आया, त्रिप्लिकेन में एक संस्था थी, जिसे 'साहित्यिक संस्था' कहते थे। मैं और कुछ अन्य साथी उसमे सम्मिलित हुए और लेख लिखने व पढ़ने के लिए उसका एक विचार-गोष्ठी के रूप मे उपयोग किया। उसके कुछ सदस्य उच्च पदासीन है, कुछ अब इस दुनिया मे नही रहे।

"उस समय वहां एक जर्मन संस्कृत विद्वान रहते थे—डॉ० गुस्टाव ऑपर्ट और मैंने उनके बारे मे 'मेल' पत्र मे फीचर लेख लिखे। जब ये प्रकाशित हुए तो मैंने महसूस किया कि मेरे अन्दर पत्र के लिए लिखने की योग्यता है।

"इससे पहले मद्रास मे प्रकाशित भारतीय पत्र 'मद्रासी' का प्रकाशन विभिन्न कारणों से रुक गया था। जब (सर) टी० मुथुस्वामी अय्यर उच्च न्यायालय के जज नियुक्त हुए, कुछ एंग्लोइंडियन पत्रों ने कुछ टिप्पणियां भी कीं, जो इसके विरुद्ध भी थी और अप्रसन्न करने वाली थी। इस अन्याय को सहन न कर पाने पर, हम मे से छ सदस्यों ने 'हिन्दू' पत्र शुरू कर दिया। जब हमने यह पत्र आरम्भ किया, हमें इसके प्रकाशन से सबंधित उत्तरदायित्वो की कोई जानकारी नही थी कि इसका सचालन कैसे करना है? इस पर कितना खर्च होना है आदि। हमारे पास बिल्कुल धन न था, अतः हमने एक रुपया और बारह आने उधार लेकर इसकी 80 प्रतियां छपवाईं और प्रकाशित की। हमने लिखा कि (सर) टी० मुथुस्वामी अय्यर की नियुक्ति उचित थी और हमने एंग्लोइंडियन पत्रो में लिखे गए 'सम्पादकीय' की भर्त्सना की।

"अगले सप्ताह श्री आर० रामचन्द्र अय्यर, जिन्होने 'मद्रासी' पत्र का संचालन किया था, ने मुझे बुलाया और प्रोत्साहन दिया। उन्होंने मुझे उन लोगों की सूची दी जो 'मद्रासी' के ग्राहक बनने को राजी हो चुके थे और उन्होने मुझसे कहा कि मैं और आगे बढ़ूं और 500 प्रतियां छपवाऊं। सीतापति नायडू—याचिका, सेलम में विद्रोह इत्यादि जैसे समाचारो को प्रकाशित करने और गवर्नर ग्रांट डफ की अनुचित कार्रवाई की आलोचना करने के कारण हमे जनता की सहानुभूति और समर्थन प्राप्त हुआ। अनेक लोग जिन्होने प्रारम्भ से स्वेच्छा से सहायता दी थी, बाद में सरकारी सेवा मे चले गये और अधिक सहयोग न दे सके, 'हिन्दू' के लेखन का पूर्ण दायित्व मुझ पर आ पड़ा।"

प्रारम्भ से ही 'हिन्दू' ने दो कर्तव्य निभाये। इसने जनता को तत्कालीन राजनीतिक, सामाजिक, व आर्थिक समस्याओं से परिचित कराया और सरकार को लोकप्रिय अभिलाषाओं से अवगत कराया। यह कहना अतिशयोक्ति न होगा कि यह पत्र जनता के लिए सोचता था और उन नेताओं, जो विदेशी शासकों से टकराना तो चाहते थे, किन्तु उन्हें चोट पहुचाने के अनिच्छुक थे, के अस्पष्ट विचारो को रूप प्रदान करता था। 'मद्रास,' जिसे अंग्रेज प्रशासन की कमिया बताने और सेवाओं इत्यादि मे भारतीयों को अधिक-से-अधिक प्रतिनिधित्व प्रदान करने जैसी मागो के लिए आवाज उठाने इत्यादि के मामलों में सुरक्षित प्रेसीडेंसी मानते थे, में 'हिन्दू' का प्रारम्भ एक दृढ साहस का कार्य था। समाचारपत्र को चलाने के लिए आज की तरह उस समय भी स्रोतों का महत्व था। उन दिनों कुछ ही ऐंग्लोइंडियन दैनिक पत्र, जिन्हे सरकारी संरक्षण और अंग्रेज व्यापारी समुदाय का सहयोग प्राप्त था, सफलता से चल रहे थे। अपनी मूल प्रकृति के कारण 'हिन्दू' उनमें मे किसी की इच्छा को पूरा न कर सका। इसकी सम्पत्ति तो इसके पाठको की सद्भावना थी और उनमें से भी सभी धन देने के लिए, यहा तक कि ग्राहक शुल्क तक देने को तत्पर न थे। मैंने सितम्बर 11, 1885 का सुब्रह्मण्यम अय्यर के हाथ का लिखा एक पत्र देखा है, जो उन्होंने माननीया सर्नोमोयी देवी, कासिम बाजार की महारानी को लिखा था, जिसमें उन्होंने उनके ग्राहक शुल्क की पावती भेजी थी। परिशिष्ट-1 मे दिये गये पत्र से हमें उन कठिनाइयों का पता चलता है, जिनका सामना 'हिन्दू' को अपने प्रारंभिक वर्षो मे करना पड़ा था, किन्तु सम्पादक के रूप मे सुब्रह्मण्यम अय्यर वित्तीय प्रबंधक प्रभारी के रूप में वी० राघवचारियर की आदर्श एक-जुटता और विचारशील मित्रों के सहयोग व सद्भावना से यह पत्र आगे चलता रहा।

भारतीय प्रेस आयोग के लिए तैयार किए गए अपने 'भारतीय पत्रकारिता का इतिहास' मे श्री जे० नटराजन कहते हैं कि पहले ही महीने के उपरांत 'हिन्दू' की छपाई 'स्कॉटिश प्रेस' को स्थानांतरित कर दी गई थी। सर भाश्यम आयंगार की अध्यक्षता मे मद्रास स्वदेशीय सस्था पुनर्जीवित की गई थी। श्री नटराजन आगे कहते है कि संस्थाने

'हिन्दू' के साथ जिन सामूहिक लक्ष्यो मे भागेदारी की, वे थे जनता के कष्टों को सरकार के सामने प्रस्तुत करना, ताकि उनका निवारण किया जा सके और प्रशासन में देशवासियो की समुचित हिस्सेदारी के दावो को स्वीकृति दिलाना। 1883 मे पत्र, जिसके लिए रघुनाथ राव ने एक प्रेस मायलापुर मे, जिसे 'हिन्दू प्रेस' नाम दिया गया, स्थापित किया। उसके लिए समर्थन जुटाने के उद्देश्य से सुब्रह्मण्यम अय्यर ने प्रेसीडेंसी का दौरा किया। वस्तुतः रघुनाथ राव ने सक्रिय रुचि ली और इसके स्तम्भो मे योगदान देते रहे। उसी वर्ष, यदि एकदम निश्चित कहा जाए तो अक्तूबर 1, 1883 को, पत्र को सप्ताह मे तीन बार प्रकाशित होने वाले पत्र मे परिवर्तित किया गया और यह अधिक अच्छे सुसज्जित 'एम्प्रेस आफ इंडिया' प्रेस से प्रकाशित हुआ। यह पाया गया कि सप्ताह मे पत्र का एक बार प्रकाशन करना वर्तमान हितो के मामलो मे समय पर बहस किए जाने के मार्ग मे बाधक बन जाता था। 'हिन्दू' लार्ड रिपन के सुधारात्मक उपायों को बदनाम करने के प्रयासों के विरूद्ध संघर्ष करने व उनका समर्थन करने और भारतीय जनता की वास्तविक भावनाओ को इंग्लैंड की जनता तक पहुंचाने मे अग्रणी था। मद्रास मे ग्राट डफ्फ के प्रतिक्रियावादी प्रशासन पर वह सावधानीपूर्वक नजर रखता था। उस वर्ष दिसम्बर में पत्र के प्रकाशन के लिए वहा स्थापित 'नेशनल प्रेस' को सुसम्पन्न बनाने हेतु धन उधार लिये जाने के पश्चात 'हिन्दू' को भी 100, माउंट रोड ले जाया गया। जनता को शिक्षित करने की योजना के भाग के रूप मे अगले वर्ष से उसी प्रेस से 'पीपुल्स मैगजीन' प्रकाशित किया गया, इससे जिन दैनिक विषयों पर 'हिन्दू' प्रर्याप्त ध्यान नही दे सकता था, उन पर विस्तृत विचार-विमर्श के लिए प्रोत्साहन दिया गया। इसका सम्पादन आनन्द चार्लू करते थे और इसे पी० मुनि-स्वामी का समर्थन प्राप्त था। 'हिन्दू' का कार्यालय 'स्वदेशी संस्था' के स्थान पर बनी महाजन सभा का मुख्यालय भी था। दिसम्बर, 1885 में, सभा के तत्वावधान मे प्रथम मद्रास प्रातीय सम्मेलन आयोजित किया गया। यह ए० ओ० ह्यूम को, जिन्होने भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना मे सहायता की थी, 'हिन्दू' और उसके संचालकों के घनिष्ट सपर्क मे लाया। एस० सुब्रह्मण्यम अय्यर जो बाद मे सर एस० सुब्रह्मण्यम अय्यर, मद्रास उच्च न्यायालय के जज के नाम से जाने जाते थे और

जो एनी बेसेंट के मित्र और भारत के लिए होम रूल आंदोलन मे उनके साथी कार्यकर्ता थे, जिन्होंने भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के प्रथम सत्र के लिए मद्रास के प्रतिनिधिमंडल का नेतृत्व किया था, ने पत्र में गहरी रुचि ली। बाद में वी० राघवाचारियर ने स्वीकार किया कि 'नेशनल प्रेस' उनके द्वारा किये गये कार्यों मे से एक था।

जब भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का तीसरा सत्र बदरूद्दीन तैयबजी की अध्यक्षता में (1887 में) मद्रास शहर में हुआ, तो उस समय शहर में 'हिन्दू' पत्र (जो राजनैतिक मंच का मुख्य केन्द्र बना हुआ था) ने इसके प्रेस को कांग्रेस की गतिविधियों के प्रचार-हेतु पूर्णतः इस्तेमाल किया। शिक्षित वर्गों मे विचारो की भूख बढ़ गई थी। इसका प्रमुख श्रेय इस युग को ही था और सप्ताह में तीन बार प्रकाशित होने पर भी यह पाया गया कि 'हिन्दू' यह मांग पूरी करने में असमर्थ था। 1889 मे नव वर्ष के दिन 'हिन्दू' को दैनिक पत्र के रूप मे परिवर्तित कर दिया गया। किन्तु वी० राघवाचारियर ने लिखा है कि यद्यपि सप्ताह में तीन बार निकलने वाले हमारे इस पत्र के अनेक ग्राहकों ने खुशी से अतिरिक्त शुल्क दिया, फिर भी ग्राहको की संख्या में काफी कमी आ गई और वित्तीय कठिनाइयां होने के बावजूद भी हम पत्र को लम्बे समय तक चलाते रहे और सप्ताह मे तीन बार के संस्करण मुफ़स्सिल पाठको के लिए बाद मे भी कई वर्षों तक निकालतें रहे।

'हिन्दू' को लम्बे समय तक विजयनगर के महाराजा श्री आनंद गजपति राज जैसे मित्रों की उदारता पर निर्भर रहना पड़ा, जिन्होने इसके चलते रहने के लिए काफी धन दिया। मुख्यतया उन्ही की सहायता से 100 माउंट रोड, मद्रास के किराये का भवन 'हिन्दू' द्वारा अर्जित किया गया। 1940 में अपने नये भवन कस्तूरी भवन, जो माउंट रोड के उत्तर की ओर है, मे जाने से पूर्व यह पत्र वहीं से प्रकाशित होता रहा। आगे हम सुब्रह्मण्यम अय्यर द्वारा किये गये 'हिन्दू' के प्रबंधन का गहराई से अध्ययन करेंगे तब तक हम इस विषय को यही छोडते है।

'हिन्दू' का सम्पादन

कलकत्ता मे 'अमृत बाजार पत्रिका' व 'बंगाली' तथा 1881 व 1882 मे क्रमश. तिलक द्वारा प्रवर्तित 'केसरी' (मराठी में) और 'मराठा' (अंग्रेजी मे), 'हिन्दू' के समकालीन प्रमुख पत्र थे। ये राष्ट्रीय प्रेस के अग्रणी रहे तथा सरकारी तंत्र उन पर निरंतर अपना क्रोध उतारता रहा। 'हिन्दू' का जन्म भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के जन्म के सात साल पहले हो चुका था और कांग्रेस ने अपने आदर्शों के प्रचार के लिए इस पत्र को तत्परतापूर्वक इच्छुक साधन के रूप में प्राप्त किया। प्रधान राष्ट्रीय संगठन से निरंतर संबंध बने रहने से यह पत्र अंग्रेजों के विद्वेष का पात्र बना रहा। इसलिए गवर्नर सर एम० ई० ग्रांट डफ के शासन-काल मे पत्र को शासन की ओर से होने वाले विरोध का सामना करना पडा। पत्र के कार्यालय का उल्लेख प्राय षड्यंत्रकारियों के अड्डे के रूप में किया जाता था, क्योकि उसने सीधे तथा उसी परिसर मे स्थित महाजन सभा के माध्यम से जनहित के लिए समर्पित कार्यकर्ताओं को इकट्ठा किया और उनका एक दल खडा किया।

बाधाओं से हतोत्साहित हुए बिना श्री सुब्रह्मण्यम अय्यर ने पत्र में सुधार करने के कार्य को अद्भुत उत्साह से प्रारम्भ किया। उन्होने 'हिंन्दू' को राष्ट्रीय पुनरुत्थान का साधन बनाया और हर ऐसे व्यक्ति का, चाहे वह किसी भी श्रेणी, जाति, धर्म, राष्ट्रीयता के रहे हो, का विरोध किया, जो राष्ट्र की प्रगति के मार्ग में रुकावट डालते थे। 'प्रेस' की शोधक भूमिका अदा करने के संबध में दृढ़ आस्थावान सम्पादक, पत्र द्वारा दोषी ठहराये गए सरकारी व्यक्तियो और जनता के आदमियो को ऐसी आलोचना से लाभ पहुंचाना चाहता था। इसमे कुछ भी व्यक्तिगत स्वार्थ की बात नही थी। सेवा निवृत्त अंग्रेज कर्मचारी जाते समय इस पत्र में एक तरह से अपने कार्यों का लेखाजोखा देखते थे। सम्पादक ने यथोचित स्थान पर उन सरकारी अधिकारियों की प्रशंसा करने से मुह नही मोडा जिन्हे उसने पहले किसी भूल-चूक के लिए आडे हाथो लिया था।

'हिन्दू' ने कभी भी नीति के रूप में अंग्रेज विरोधी रुख नहीं अपनाया। रिपन का इस पत्र से बढकर अन्य कोई बडा मित्र न था, जबकि पत्र द्वारा लिटन या ग्राट डफ की, उनके घमडी स्वभाव या 'गौराग व्यक्ति के बोझ' की उनकी अतिशय धारणाओं के लिए निन्दा की गई थी। पत्र ने लार्ड रिपन के 'स्थानीय स्वायत्त शासन' प्रस्ताव की सराहना की और सम्पादक ने नई योजना के अन्तर्गत आने वाले उत्तरदायित्वो से जनता को परिचित कराने के लिए प्रेसीडेंसी का दौरा किया।

इस पत्र के प्रति वाइसराय की ऊची भावना थी, अत: महत्वपूर्ण विषयों पर जब कभी वह जनमत को जानना चाहते, तो कहते, "हिन्दू" को लो, और देखो कि वह क्या कहता है?"

हाउस आफ कामंस के लिए दादाभाई नौरोजी के चुने जाने पर सम्पादकीय मे 'हिन्दू' अंग्रेज शासकों के प्रति अपने रुख के सबंध मे हमे एक अतर्दृष्टि प्रदान करता है। चुनाव का स्वागत करते हुए उसने, "'ब्रिटिश सविधान' के शानदार लचीलेपन और अंग्रेजो तथा अन्य साम्राज्य-वादी राष्ट्र की उदार भावना, जिसने उस देश मे अंग्रेजों के शासन को जीवित रखा, का महत्व भी स्वीकार किया। ऐसी उदारता केवल इंग्लैंड मे ही सभव है. . .वे बंधन, जिनसे भारत शासक देश से बंधा है, केवल राजभक्ति की भावना ही नही है, इम्पीरियल कौंसिल में एक भारतीय सदस्य की वास्तविक उपस्थिति से सिद्ध होता है कि उनमें सच्ची, गंभीर, और वास्तविक सवैधानिक समानता भी विद्यमान है।" सम्पादक ने उस संवैधानिक समानता को आगे बढ़ाने के निमित्त धर्मयुद्ध छेडा। जब कभी अंग्रेज शासन को इस देश मे जीवित रखने वाली उस उदार भावना की अंग्रेज अधिकारियो द्वारा अवहेलना की जाती, तो वह लाठी लेकर पीछे पड जाते थे।

सुब्रह्मण्यम अय्यर शक्तिशाली प्रातीय गवर्नरों द्वारा किये जाने वाले निन्दनीय कार्यो को देखकर उन्हें आडे हाथों लेने से नही चूकते थे। चिंगलपुट मामला इसका सबसे बडा प्रमाण है। गवर्नर ग्राट डफ द्वारा सेलम की घटनाओं पर जिस ढंग से कार्रवाई की गई, उनसे यह सिद्ध हो गया कि वह प्रशासक के रूप में अयोग्य है। उस समय

चिंगलपुट अपेक्षाकृत पिछड़ा हुआ जिला था और वहां किसान बड़ी कठिनाई से अपनी आजीविका प्राप्त करते थे। मानसून में अचानक परिवर्तन होते रहने से वह बड़े पीड़ित थे। अपनी सामान्य गरीबी के कारण वह किस्त नहीं दे पाते थे, निठल्ली जमींदारी और कष्टप्रद लगान ने उनकी कठिनाइयां बढ़ा दी थीं। उन्होंने शिकायत की कि तहसीलदार सीतापति नायडू ने किस्त इकट्ठा करने के लिए सख्त रवैया अपनाया ताकि वह अपने से बड़े अधिकारियों, विशेषतः जिला कलक्टर प्राइस की दृष्टि में अच्छा बना रह सके। ग्रांट डफ के मद्रास के गवर्नर बनने से बहुत पहले उस समय संकट शुरू हो गया था, जब मई 1881 में कांजीवरम ताल्लुका के एक गांव में कुछ किसानों की सम्पत्ति कुर्की कर ली गई थी। उन्होंने आरोप लगाया कि उन्हें इसलिए तंग किया जा रहा है, क्योंकि उन्होंने तहसीलदार को घूस देने से मना कर दिया था। उन्होंने जिला अधिकारियों से इस क्षतिपूर्ति के लिए सहायता मांगी, किन्तु कुछ सुनवाई नहीं हुई, तब उन्होंने मद्रास सरकार के पास याचिका दायर की, जांच पड़ताल का आदेश दिया गया और दो सौ से अधिक किसान उस जांच-पड़ताल में उपस्थित होने के लिये गये। तहसीलदार बरी कर दिया गया, किन्तु किसानों ने जांच की निष्पक्षता के प्रति संदेह व्यक्त किया। ग्रांट डफ से एक प्रतिनिधिमंडल मिलने गया, जिसने किसानों के कष्टों के बारे में उन्हें बताया। उसने उन्हें राहत देने की बजाय, जिन किसानों ने तहसीलदार पर आरोप लगाये थे, उन्हें कष्ट देकर बदला लेने की कर्मचारियों को अनुमति दे दी। गांव के तहसीलदार के विरुद्ध आरोपों को प्रस्तुत करने वाले गांव के एक साहसी मुंशी को नौकरी से निकाल दिया गया और झूठी गवाही के आरोप में 18 महीने की कड़ी सजा दी गई।

'हिन्दू' ने उस सारे घटनाचक्र के लिए गवर्नर को हर तरह से दोषी ठहराया। मद्रास के पांच गण्यमान्य नागरिकों के साथ मिलकर सम्पादक ने चिंगलपुट के किसानों की सहायता के लिए राहत कोष शुरू किया। चिंगलपुट का मामला तब जाकर समाप्त हुआ, जब तहसीलदार स्वयं कुछ गोपनीय सरकारी कागजात चुराने के आरोप में (अगस्त 1882) अपराधी पाया गया। राजनीतिक विषयों के प्रसिद्ध लेखक पी० केशव

पिल्लई ने यह संकेत करने के उपरांत कि तहसीलदार को न्यायिक दंड कैसे मिला, संक्षेप में लिखा जिले भर में फैली बदनामी का विशिष्ट सरकारी घपले का मामला, जिसे 'हिन्दू' ने उजागर किया। जनता को 'हिन्दू' के प्रति कृतज्ञ होना चाहिए कि उसने उस तथ्य की जानकारी दी कि यूरोपीय व भारतीय कर्मचारी गांव में किसानों से निर्लज्जतापूर्वक जो जबरदस्ती वसूली करते थे, अब उसमें तीव्रता से कमी आती जा रही है। 'हिन्दू' ने वसूली की ऐसी बदनामी की कहानियां, यह सोचे बिना प्रकाशित की, कि इसका असर यूरोपियनों, ब्राह्मणों या अब्राह्मणों पर क्या पड़ेगा?

मस्जिद के सामने से हिन्दुओं को जुलूस ले जा सकने के लिए अदालत द्वारा बार-बार दिये गए फैसले से सेलम के कुछ मुसलमानों द्वारा इन्कार करने पर कुछ घटनाएं घटीं, जिसे ग्रांट डफ प्रशासन की नयी अर्थ निकालने वाली प्रवृत्ति ने बढ़ा-चढ़ाकर राजद्रोहात्मक विद्रोह का रूप दे दिया। दंगे तीन दिन तक चले। सेलम में विशेष पुलिस तैनात की गई। मालाबार से एक विशेष मजिस्ट्रेट लेविस मैकाइवर और एक विशेष सेशन जज विग्राम को तुच्छ आरोप लगाकर गिरफ्तार किये गये अनगिनत व्यक्तियों से पूछताछ करने के लिए सेलम भेजा गया। उनमें से अधिकांश को, जिनमे डा० मणिक्कम पिल्लई, अनेक सम्मानित ईसाई नागरिक और चिकित्सा अधिकारी शामिल थे, को आजीवन कैद की सजा देकर अण्डमान भेज दिया। इस सारे मामले का कारण खाली वारंट जारी करने मे दिखाई देता था। बहुत बड़ी संख्या में लोग गिरफ़्तार होने से बचने के लिए अपने घरों को छोड़ कर चले गये।

उच्च न्यायालय ने अधिकांश मामलों मे दी गई सजाओं की पुष्टि कर दी। तीन आवेदकों को, जिनमें सी० विजयराघवचारियर और एक कर्मचारी भी शामिल थे, इस कारण हटा दिया गया कि उन्होंने कलक्टर को भावी विद्रोह की चेतावनी नहीं दी। उन्हें इन आरोपों की असत्यता सिद्ध करने के लिए दो वर्ष तक मद्रास मे काम करना पड़ा। यहां, इस बात का उल्लेख किया जा सकता है कि सी० विजयराघवचारियर दोषी ठहराये गए थे, किन्तु वह अपने आपको निर्दोष साबित करने में सफल हो गए। वह झूठी गवाही देने वाली जनता के दोषारोपण से भी बच गये। अंग्रेजों की न्याय भावना का उस समय बहुत कुछ समर्थन किया

गया, जबकि कोयम्बतूर से आए जज पार्कर द्वारा विजयराघवचारियर और अन्य स्थानीय नेताओं के विरुद्ध झूठी गवाही में मदद देने वाले अनेक लोगों को सजा दी गई।

विजयराघवचारियर ने उदारतापूर्वक स्वीकार किया कि 'हिन्दू' द्वारा न्याय के लिए तथ्यों व आकडो के साथ की गई सेवा एक अनोखी बात थी। सम्पादक जी० सुब्रह्मण्यम अय्यर ने सेलम घटनाओं की सूचना देने के लिए पी० केशव पिल्लई को विशेष सम्वाददाता नियुक्त किया था। पकडे गए लोगो को मुक्त करवाने के लिए 'हिन्दू' ने जोरदार अभियान आरभ किया। मद्रास सरकार तभी झुकी, जब लार्ड रिपन ने सेलम घटना का रहस्य लदन मे खोल देने की धमकी दी। वह जब मद्रास आये तो विजयराघवचारियर और रामस्वामी मुदालियर ने उन्हे एक ज्ञापन दिया।

इस सब को अधिक अच्छे ढग से बताने के लिए पत्र ने यह समाचार भी छापा कि जिस समय दगा चल रहा था, जिला मैजिस्ट्रेट मैकलीन घोडो की रेस देखने के लिए सेलम छोडकर बगलूर चला गया था। एक पत्र के रूप मे प्रकाशित समाचार मे उस पर यह आरोप लगाया गया कि यद्यपि वह होसुर मे ठहरा था, फिर भी उसने यात्रा भत्ता लिया। केशव पिल्लई ने बाद मे बताया कि इस बदनामी का लेख छापने के लिए 'हिन्दू' पर कोई अभियोग नही चलाया गया और ग्राट तथा उसके मन्त्रिमडल ने श्मशान की सी चुप्पी साध ली। पत्र उन भारतीयों के लिए अंग्रेजी से कम नही आतक पैदा करने वाला था, जो इसकी उम्मीदों पर पूरे नही उतरते थे। सम्पादक मृतक को भी नही छोडता था। एक बार कुछ पाठकों ने देखा कि सुब्रह्मण्यम अय्यर किसी व्यक्ति की मृत्यु के समाचार पर टिप्पणी करते हुए उसकी कमियो को भी बतलाते थे। जब उनका ध्यान इस ओर दिलाया गया तो उन्होंने उत्तर दिया, "मैं अपने राष्ट्र की प्रगति को सर्वोपरि महत्व देता हूं। भारत के उज्ज्वल भविष्य से अधिक प्रिय मुझे कुछ भी नहीं है। यही हमारा सर्वोच्च व सर्वाधिक प्रिय आदर्श है। इसके समक्ष सभी व्यक्तिगत बाते गौण है। मैं अपने सभी छोटे-बडे देशवासियो से जोर देकर कहना चाहता हूं कि जब भी किसी व्यक्ति के जीवन के कार्य और उसके आचरण राष्ट्रीय हितों के विरुद्ध होते हैं,

वह हमसे दया की उम्मीद नही कर सकता, चाहे वह कितना ही बडा व्यक्ति क्यों न हो। जब कोई व्यक्ति मरता है, हम उसके द्वारा किये गए कार्यो का पुनरीक्षण कर सकते है। मृत्यु के उपरात हम उसकी प्रतिष्ठा नही छीन सकते है। जो कुछ हम लिखते है, मृतक पर उसका कोई असर नही होता, किन्तु जीवित लोग हमारी नीति से शिक्षा ग्रहण कर सकते हैं। जवान व बूढे जो अपने पीछे अच्छी प्रतिष्ठा छोड जाना चाहते है, मातृभूमि के प्रति अपने पवित्र दायित्व को न भूले। सब यह अनुभव करे कि जब भी वे मरेगे, उनके दोष, यदि वे राष्ट्रहित और आत्म सम्मान को ठेस पहुचाते है – माफ नही किये जाएंगे। जो मृत्यु के उपरांत अपने देशवासियों की दृष्टि मे अच्छे बने रहना चाहते है, वे भारत के प्रति अपने कर्त्तव्य को याद रखे। आत्मपरक प्रवृत्तियों और सार्वजनिक हितो को कम करने वाली भावनाओं का पूरी तरह से भडा-फोड किया जाय। खेद है कि मैं मृतक सबंधी समालोचना लिख रहा हू। लेकिन इसके अतिरिक्त मेरे पास और कोई चारा नही है। राष्ट्रीय हितो पर स्थायी आघात, जो हमारे कुछ लोग निरतर और जानबूझकर, या तो अपनी बढ़ोतरी या सरकार के सदस्यों की सुकुमार व दिव्य कोमल-ताओं को चोट पहुंचने के भय से करते रहे हैं, की तुलना में प्रिय सबधियों की भावनाए मेरे लिए कुछ महत्व नही रखती।

हिन्दू ने अपने प्रारम्भ होने के वाद कुछ ही वर्षो के भीतर अखिल भारतीय ख्याति अर्जित कर ली थी। देशी रियासते, जैसे—बडौदा, ट्रावनकोर, मैसूर, हैदराबाद और कश्मीर में रहने वाले लोग भी इसके स्तम्भो के माध्यम से अपनी उत्कट अभिलाषाओ की अभिव्यक्ति पाते थे। एक प्रकार से पत्र उन्हें अपने समकालीन कलकत्ता के 'अमृत बाजार पत्रिका' के समान राष्ट्रीय जीवन की मुख्यधारा मे ले आया। अनेक प्रसिद्ध नेता इसके हितैषी थे–जिनमे से कुछ का उल्लेख किया जा सकता है – रानडे, तिलक, फिरोजशाह मेहता, डब्ल्यु० सी० बनर्जी, सुरेन्द्रनाथ बनर्जी, एलन आक्टे-वियन ह्यूम, मदनमोहन मालवीय, लाला लाजपतराय, विपिनचन्द्र पाल, दादाभाई नौरोजी और गोखले। ब्रिटिश ससद के सदस्यो मे मुफ्त बाटने के लिए ह्यूम 'हिन्दू' की प्रतिया खरीदते थे। उन्होंने एक

बार सुब्रह्मण्यम अय्यर को लिखा था कि उनके लेख लंदन के 'टाइम्स, के लिए भी लाभदायक होंगे।

'हिन्दू' का एक घनिष्ठ मित्र जो इसके प्रथम अंक को देखने के बाद इसके सम्पादक से मिलने आया था, सर्जन मेजर निकल्सन था। वी० राघवचारियर के अनुसार निकल्सन ने उन्हे और सुब्रह्मण्यम अय्यर को पत्र के सुसचालन के तरीकों के विषय मे महत्वपूर्ण सलाह दी। उसने सामयिक मामलों पर लेख लिखकर भी अपना योगदन दिया।

'हिन्दू' निरंतर सम्पादक के विचारो को अभिव्यक्त करता रहा। समाज सुधार पर सुब्रह्मण्यम अय्यर का दृष्टिकोण आमूल परिवर्तन करने का था जिसे जनता का रूढिवादी वर्ग पसंद नहीं करता था। आय विषयक विवाद के समय अय्यर चाहते थे कि सरकार रूढ़िवादी विचारों की उपेक्षा कर कार्य करने के लिए आगे बढ़े। उनका तर्क था कि जब दूरगामी समाज सुधार करने होगे तो राज्य को, उस विपक्षकी, जो ऐसे उपायो पर भिन्न विचार रखता है, अनदेखी कर देनी चाहिए। यह विचार उनकी पहली धारणा से भिन्न था, जब उन्होंने समाज सुधार के क्षेत्र मे राज्य के हस्तक्षेप का विरोध किया था। उनके सहभागी वी० राघवचारियर यह बिल्कुल पसद नही करते थे कि सामाजिक प्रश्नों पर इन उच्च विचारों को प्रचार के लिए पत्र का उपयोग किया जाये। दोनो के बीच तनाव बढने के कारणो में यह भी एक था। शायद प्रबधक ने महसूस किया कि पत्र के परिचालन पर इसका बुरा प्रभाव पड़ेगा, क्योंकि अधिकाश जनता प्रगतिशील सामाजिक कानून को स्वीकार करने के लिए तैयार नही थी।

उस समय के अन्य राष्ट्रवादी पत्रो की तरह 'हिन्दू' ने देश की आर्थिक दशा पर काफी विचार-विमर्श किया। सुब्रह्मण्यम अय्यर ने सुझाव दिया कि जहा तक संभव हो, आर्थिक स्थिति पर प्रभाव डालने के लिए प्रशासन का भारतीयकरण होना चाहिए। एक सम्पादकीय मे पत्र ने भारतीयों को अंग्रेज अधिकारियों की तुलना में कम वेतन लेने पर चेतावनी दी। पत्र ने रेलवे जैसी परियोजना का भी विरोध किया, जिससे इस देश में उपलब्ध कच्चे माल का और भी अधिक शोषण करके

अंग्रेज ही लाभान्वित होते थे। इसमे वस्त्र उद्योग श्रमिकों के काम के घंटों के लिए विनियम बनाने का भी विरोध किया गया, क्योंकि इससे नवजात वस्त्र उद्योग पर बुरा असर पड़ता। इस चाल में इसने लंकाशायर के रईसों का हाथ देखा, जो अपने भारतीय प्रतिद्वंद्वियों को मिटा देना चाहते थे, फिर भी रोपण-श्रमिकों के भविष्य को बेहतर बनाने की मांग की गई तो पत्र ने उसका हार्दिक समर्थन किया, क्योंकि चाय और काफी रोपण अंग्रेजों के स्वामित्व में थे।

'हिन्दू' गंभीर विषयों के सम्पादकीय विचार-विमर्श में ही सीमाबद्ध नही था, बल्कि पाठकों के लाभ के लिए नये स्तंभों मे महत्वपूर्ण घटनाओं पर प्रकाश डालता था। बाल गंगाधर तिलक से संबंधित एक महत्वपूर्ण स्मरणीय घटना है। समाज सुधार पार्टी ने, जो उस समय गोखले के नियंत्रण मे थी, सामाजिक सम्मेलन, जो 1896 मे भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के पूना-सत्र के साथ-साथ हो रहा था, के लिए प्रतिनिधि चुनने के निमित्त एक निजी मकान में बैठक आयोजित करने की घोषणा की। तिलक को प्रस्तावित बैठक का आभास मिला और उन्होंने निश्चित समय से काफी पहले अपने अनुयायियों के साथ उस स्थान पर पहुंचकर सभी उपलब्ध कुर्सियों पर अधिकार कर लिया। बाद में जब गोखले और उनके मित्र आए, तो उन्हें बैठने के लिए स्थान न मिल पाया। 'हिन्दू' के सम्वाददाता ने पूना से पत्र के लिए तार भेजा कि तिलक ने बैठक करने तथा अपने प्रतिनिधि चुनवाने हेतु अपने 'लॉ ट्यूटोरियल कालेज' के छात्रों की सहायता ली है, यहां तक कि इसके आयोजकों को भी शामिल नही होने दिया। इस समाचार को भेजने का अत्यंत अप्रत्याशित परिणाम हुआ। तिलक ने 'हिन्दू' पर मानहानि का दावा किया, फिर भी उनका उद्देश्य इसे अंत तक जारी रखने का न था। वह केवल सम्पादक का ध्यान इस तथ्य की ओर दिलाना चाहते थे कि समाज सुधार पार्टी के अन्दर ऐसे तत्व घुस आये थे, जो "बहुमत बनाने के संवैधानिक साधनों पर अविश्वास कर रहे थे।" रिपोर्ट से भी अधिक उसके शीर्षक—"पूना मे अपमानजनक झगड़ा"—ने तिलक को परेशान किया होगा।

किन्तु यह घटना 'हिन्दू' को बम्बई सरकार, जिसने 1897 मे 'तिलक को जेल भेज दिया था, की आलोचना करने से न रोक सकी। इसने प्रिवी कौंसिल की न्यायिक समिति की कार्रवाई की आलोचना की, जिसने सजा के विरुद्ध की गई तिलक की अपील को ठुकरा दिया था। पत्र ने घोषणा की—"प्रिवी कौंसिल का निर्णय इस सार्वभौम विश्वास को नहीं बदलेगा कि एक निरपराध, वफादार व उच्च चेतना सम्पन्न नागरिक की कुछ खून के प्यासे ऐंग्लोइंडियनों की शिकायत पर बलि दी गई है—श्री तिलक के प्रति न्याय के अलावा यह आशा भी की गई थी कि इस अपील से राजद्रोह के कानून पर अधिकारिक परिभाषा बनेगी, किन्तु वह आशा अब समाप्त हो गई है। प्रसिद्ध विधिवेत्ताओं और प्रशासकों द्वारा अभिव्यक्त विचारों का स्थान इन परिस्थितियों मे कार्यरत एक नौजवान तथा अनुभवहीन जज की अधिघोषणा ने ले ली, जबकि जनता का अनुमान था कि इस नये जज के प्राधिकार और महत्व से अच्छे परिणाम निकलेंगे।" एक सबसे महान नेता के बचाव के पक्ष में लिखे गए इस निर्भीक सम्पादकीय से देशभक्तो मे हर्षोल्लास व्याप्त हो गया। 'नौजवान और अनुभवहीन' यह जज, जिसे इस पत्र ने आड़े हाथों लिया, बम्बई उच्च न्यायालय का जस्टिस स्ट्रेची था।

यह उन अनेक अवसरो में से एक था जब पत्र ने अधिकारियों पर तीव्र प्रहार किये। जब मदुरै के प्रसिद्ध जिला कलक्टर क्रोले को निराधार आरोप लगाकर निलंबित किया गया, तो सुब्रह्मण्यम अय्यर ने अपने सहायक को जांच-पड़ताल, जो गोपनीय ढंग से की गई, का समाचार एकत्रित करने के लिए भेजा। सम्वाददाता दिन-प्रतिदिन की कार्रवाई से जनता को अवगत कराता रहा, जिससे अधिकारी नाराज हो गए। अंत मे क्रोले को उनके विरुद्ध लगाये गए आरोपो से बरी कर दिया गया और यह मुख्यत: जनमत के कारण ही हुआ, जिसे पत्र ने कलक्टर के पक्ष मे तैयार किया था।

सम्पादक के रूप मे कार्य करते हुए सुब्रह्मण्यम अय्यर स्वयं को बराबर के साथियों का मुखिया मानते थे। यद्यपि वह मितभाषी थे, फिर भी अपने कनिष्ठों को सर्वोत्तम कार्य करने हेतु प्रोत्साहित करते रहते थे। करुणाकर मेनन, जो 1898 में सुब्रह्मण्यम अय्यर के 'हिन्दू'

के कार्यभार से मुक्त हो जाने के उपरांत इसके सम्पादक बने, ने लिखा है कि अय्यर ने 1897 में इग्लैंड से लौटने पर सबसे पहले उन्हें उनकी अनुपस्थिति में पत्र का सुचारु रूप करने से सचालन के लिए बधाई दी थी। इस बीच मेनन ने पत्र के माध्यम से जनता के रूढिवादी वर्ग की समाज सुधार के प्रश्नो पर आलोचना को कम करने की कोशिश की और फिर से काम सभालने के बाद अय्यर ने वही नीति अपनायी।

'क्रोले' मामले के विशेष सम्वाददाता के० सुब्बाराव ने एक बार किसी प्रसिद्ध एंग्लोइंडियन राष्ट्रीय नेता की मृत्यु का समाचार छाप दिया। दूसरे दिन घोषित मृतक व्यक्ति आया और अपनी मृत्यु के झूठे समाचार का तीव्र विरोध किया। जांच करने पर पता चला कि यह भूल इसलिए हुई कि एक मित्र ने सुब्बाराव को यह समाचार दिया था और उन्होंने उस पर विश्वास करके सम्पादक की अनुपस्थिति में उसे छाप दिया था। सुब्बाराव और करुणाकर मेनन दोनों ने सुब्रह्मण्यम अय्यर के इस गुण को प्रमाणित किया कि वह अपने से छोटे कर्मचारियों द्वारा की गई ऐसी गलती को आसानी से माफ कर देते थे, वह दूसरों के दृष्टिकोण को जानने के लिए हमेशा उत्सुक रहते थे, जिसके कारण वह अपने अधीन काम करने वालो के प्रिय थे। अपने 'प्रेस के इतिहास' पुस्तक में एस० पी० त्यागराजन लिखते है कि उन्होंने सुब्रह्मण्यम अय्यर से मुलाकात और बातचीत जीवन के लगभग ढलते दिनो मे की। वह लिखते हैं कि यह महान सम्पादक यह स्वीकार करने के लिए हमेशा तैयार और इच्छुक था कि 'हिन्दू' के उसके सहयोगी सोने से तोलने योग्य थे।

सुब्रह्मण्यम अय्यर ने अनेक युवा पत्रकारो को प्रशिक्षित किया। सी०वाई० चिन्तामणि और नटराजन ने, जो बाद मे क्रमश 'लीडर' और 'इडियन सोशल रिफार्मर' के प्रतिष्ठित सम्पादक बने, पत्रकारिता की शिक्षा इन्ही से पायी थी। सर तेजबहादुर सप्रू कहते है कि सुब्रह्मण्यम अय्यर ही वह व्यक्ति थे, जिन्होने उत्तर प्रदेश मे अपने शिष्य चिन्तामणि के द्वारा पत्रकारिता को आगे बढाया। 'हिन्दू' की स्वर्ण जयंती क अवसर पर अपने पत्र 'लीडर' में लिखते हुए चिन्तामणि ने हर्षपूर्वक इसकी पुष्टि की कि बी० एम० मलाबारी, क्रिस्टोदास पाल, और तिलक जैसे महान नेताओं के साथ सुब्रह्मण्यम अय्यर, देश की चौथी महान विभूति है।

'हिन्दू' के सम्पादक के रूप मे उन्हे लगभग प्रतिदिन कठिन विषमताओं के विरुद्ध लड़ना पडता था। सुब्रह्मण्यम अय्यर को भारतीयों द्वारा सचालित दैनिक पत्रो की अंतिम जीत व उनसे अधिक शक्तिशाली प्रतिद्वंद्वी एंग्लोइंडियन पत्रों के सम्मुख अपना अस्तित्व बनाये रखने की योग्यता पर पूरा विश्वास था। जब वह 1897 मे 'मद्रास शार्टहेड राइटर्स एसोशियेशन' को सबोधित कर रहे थे, उन्होने देश मे पत्रकारिता के भविष्य पर अपने विचार व्यक्त किये। उनका विचार था कि समय आने पर भारतीय पत्र एंग्लोइंडियन पत्रो से आगे बढ जायेगे, क्योंकि भारतीय पत्रकार अपने विदेशी साथियों की अपेक्षा राष्ट्र की धडकनों को अच्छी तरह महसूस करते है। वे जनतंत्र मे, विपक्षी दलों के भारतीयो द्वारा, पत्रों का संचालन पंसद करते थे। उन्होंने अपने श्रोताओ को बताया कि किसी एग्लोइंडियन पत्रकार के लिए पत्र में काम करना एक व्यापार की भाति है, जबकि उसका प्रतिरूप भारतीय पत्रकार कुछ अधिक उत्सुक, देश के हितो को छूने वाली किसी भी बात के लिए अधिक गभीर है। उन्होने घोषणा की कि "भारत में पत्रकारिता जन-कल्याण का साधन है, एक भारतीय स्कूल शिक्षक की भाति लोकहितकारी है और वास्तव में वह स्कूल शिक्षक का प्रतिपूरक है।" स्कूल शिक्षक छोटे बच्चों का ध्यान रखता है, किन्तु पत्रकार बुद्धिमान और अनुभवी वयस्क लोगों का ध्यान रखता है और उस काम को पूरा करता है, जो पूरा नही हो पाया।

सुब्रह्मण्यम अय्यर ने 'हिन्दू' और अन्य पत्रों, जिनके लिए उन्होने काम किया, मे अपने विचारो को व्यावहारिक रूप दिया।

सुब्रह्मण्यम अय्यर के 'हिन्दू' के प्रबंधन से सबंधित दो कहानियो के साथ हम इस अध्याय का समापन करते है। श्री एस० नटराजन अपनी पुस्तक 'हिस्ट्री आफ द प्रेस इन इडिया' की प्रस्तावना मे लिखते है कि सुब्रह्मण्यम अय्यर ने जब यह देखा कि चिन्तामणि देर से काम पर आते हैं, तो उन्होने पता चलाया कि उनके पास घडी नही है। उन्होने एक घड़ी उन्हे खरीद दी और कीमत वेतन से काट ली। नि सदेह यदि पत्र सुसम्पन्न होता तो घड़ी उन्हे उपहारस्वरूप दे दी जाती।

डॉ० पी० वरदाराजुलु नायडू ने 'हिन्दू' की स्वर्ण जयंती के अवसर पर अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए कहा कि नौकरशाही की अचूक दृष्टि

के अलावा पत्र को इसकी कीमत चुकाने के लिए कड़ा संघर्ष करना पड़ा। वह याद दिलाते है कि सरकारी कर्मचारियो की आधी भूखी हालत और अनगिनत कष्टो पर सार्वजनिक बैठक मे भाषण देकर आने के उपरांत उनके हाथ मे उस दिन के 'हिन्दू' का अक रखा गया। स्थानीय समाचार स्तभ मे संपादक ने देखा कि उसमें एक टिप्पणी दी गई है, जिसमे 'हिन्दू' पत्र के कर्मचारियो के इस कष्ट को बताया गया था कि उन्हे दो महीनो से वेतन नही मिला। डॉ॰ वरदाराजुलु कहते हैं, "श्री सुब्रह्मण्यम अय्यर चिढने की अपेक्षा अपने मन मे बहुत लज्जित हुए। वह उसी समय आवश्यक धन लाने जल्दी से अपने घर गये और अगले ही दिन कर्मचारियो को उनके वेतन का भुगतान कर दिया।"

जनता का जनाभिवक्ता मंच

दक्षिण भारत को देश के राजनैतिक मानचित्र में रखने का श्रेय जी० सुब्रह्मण्यम अय्यर को ही है। उनके अवतरण से पहले मद्रास प्रेसीडेंसी से बहुत कम राजनैतिक गतिविधियां थी और यह देखा जाता था कि महत्वपूर्ण विषयों पर प्रसिद्ध नेताओं के भाषण सुनने के लिए मद्रास शहर में भी यथेष्ट सख्या में श्रोता मिलना कठिन हो जाता था।

'हिन्दू' ने दक्षिण मे राष्ट्रीयता की भावना पैदा की जिसे बाद मे महाजन सभा ने सुदृढ़ किया। उस सभा की स्थापना सुब्रह्मण्यम अय्यर ने 1884 में की थी। पहले कहा जा चुका है कि उन दिनों राजनीति एक नीरस कार्य समझा जाता था। जनमत के प्रतिनिधि अभ्यावेदन और याचिकाए अधिकारियो को भेजने मे ही संतुष्ट हो जाते थे और इसमे महाजन सभा पूरा भाग लेती थी।

किन्तु सुब्रह्मण्यम अय्यर कुछ भिन्न ही प्रकार के राजनीतिज्ञ थे। अंग्रेजों से सरक्षता पाने मात्र में उनकी रुचि नही थी, वह यहा शिक्षित वर्गो को रियायतें देने के ब्रिटिश रवैये का विरोध करते थे। वह अपने देशवासियो को समान अवसर दिलाने की माग करते थे, ताकि वे भारत के मामलों मे महत्वपूर्ण भूमिका निभा सके। एक बार उन्होने अपने एक साथी से कहा था, "ईश्वर ने अपनी शाश्वत दया और बुद्धिमत्ता से युगो के कष्टों और दासता के बाद भी हमारी चेतना को कोई क्षति नही पहुचाई। पश्चिम के इग्लैड, अमेरिका या जर्मनी से सर्वोत्तम प्रतिनिधियो को लाओ। भारतीयों को वही प्रशिक्षण, वही सुविधाए और अवसर प्रदान करो। विश्व भर की प्रतियोगिता मे भारतीय अपना शाश्वत स्थान बनाए, आज भी प्रशासन मे यदि तुम समान अवसर प्रदान करो तो जज, वकील, न्यायविद, मैकेनिक, इंजीनियर, महाजन, सिपाही, राजनीतिज्ञ, उपदेशक, किसी भी विचारित दिशा में जीवन का कोई क्षेत्र नहीं होगा, एक भी नही, जिसमे भारतीय असफल होगे। इस समय हमारी राष्ट्रीय प्रगति का केवल यही एक उपाय है।" अपने देश-वासियों के सामर्थ्य मे सर्वोच्च विश्वास की यही चेतना थी, जिससे सुब्रह्मण्यम
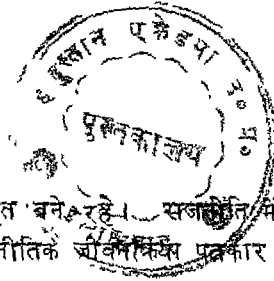
अय्यर अंग्रेजो के विरुद्ध संघर्ष में उत्साहित बने रहे। राजनीति में आने से पहले वह विख्यात लेखक थे और राजनीतिक जीवन में पत्रकार के रूप मे उनकी भूमिका की पूरक थी।

किन्तु वह देश के लिए अंग्रेजों द्वारा किए गये कल्याण कार्यों जैसे उग्रवादी तत्वों को समाप्त कर कानून-व्यवस्था बनाये रखना, विदेशी आक्रमणो से देश की सुरक्षा, अंग्रेजी के माध्यम से सर्वोत्तम शिक्षा प्रणाली की व्यवस्था, जिसने बाहर संसार पर दृष्टिपात करने मे खिड़की का काम किया इत्यादि को मानने के लिए सदैव तैयार रहते थे। वह नही चाहते थे कि अंग्रेज देश को छोडकर चले जाए। प्राय वह कहा करते थे कि ऐसे कदम देश की प्रगति मे रुकावट डालने वाले सिद्ध होगे। वह तो चाहते थे कि प्रशासन एव कानून बनाने मे भारतीयों को अधिक भाग मिले। वह कोई लोकनायक मात्र न थे, बल्कि उनको इच्छा थी कि उनके देशवासी विदेशी शासकों द्वारा, चाहे वे आनाकानी से ही हो, उपलब्ध साधनों का पूरा लाभ उठाए व अच्छी तरह पढ़ाई करके अपने आपको सुसम्पन्न बनाएं।

उन्होने अपने देशवासियो के सामने जापान का उदाहरण रखा, जो उस समय लम्बे डग भर रहा था। किस तरह एक प्राचीन देश बदलते समय के साथ स्वय को बदल रहा है जापान इसकी मिसाल था। वह सामाजिक स्तर पर भारतीयों को अंग्रेजो से स्वतंत्र रूप में मिलने के विरुद्ध थे, क्योंकि विदेशी उन गुणों मे बहुत दृढ है, जबकि हम बहुत कमजोर हैं। उन्हे अपने देश से घनिष्ट प्रेम है, अपनी निजी उपलब्धियो पर उत्कट गौरव और महानता.. हमारे अंदर निराशा उत्पन्न करने का कारण बनेगा, सामान्यत: जब कोई कमजोर अधिक बलशाली का साथी बनता है, तो महत्वहीनता के अंधेरे मे डूब जाता है।" इसमें उसका दृष्टिकोण आइरिस सिन्न फीं आंदोलन के नेताओं जैसा था, जिन्होने अपने अनुयायियों को उपदेश दिया था कि वे समान कारणों को ध्यान में रखकर सामाजिक रूप में अपने को अंग्रेजों से दूर रखें।

सुब्रह्मण्यम अय्यर देश के भविष्य का ध्यान रखते थे और उन लोगों के विरुद्ध थे, जो भूतकाल की अधिक चिंता करते थे। वह भूतकाल की बात केवल तभी करते, जब वर्तमान संघर्ष में उससे कुछ सहायता मिले। उन्होने

भारत के प्रसिद्ध वस्त्र उद्योग, जिसे लकाशायर की होड मे नष्ट कर दिया था, के पक्ष मे बहुत कुछ लिखा और कहा वे भारत के लिए स्वायत्त सरकार और ससदीय पद्धति चाहते थे। प्राचीन पचायत पद्धति, जो इस समय भी सारे भारत में प्रचलित थी, जब कि कुछ असभ्य जगली लोग ब्रिटेन मे रहते थे। वह कहा करते थे कि पश्चिमी राष्ट्र प्रगति कर सकते है, क्योकि उनके भूतकाल की तुलना में उनका वर्तमान गौरवशाली है, जबकि भारत के मामले मे इसका उल्टा सत्य है। भारतीय परम्परा का दूसरा रूप, जिसे वह पसंद नहीं करते थे, परलोक पर अधिक जोर देना था, जिससे यही और इसी वक्त लोगो की दशा सुधारने के उपायो की उपेक्षा हो रही थी। ये सब चीजे दर्शाती है कि वह यथार्थवादी राजनीतिज्ञ थे। भारत के सामने उत्पन्न समस्याओं के समाधान के लिए दृढ व सैद्धांतिक रुख अपनाने से घृणा करते थे।

सुब्रह्मण्यम अय्यर ने कांग्रेस आंदोलन के प्रारम्भ से ही इसमे सक्रिय भाग लिया। वह लगभग सभी कांग्रेस सम्मेलनों में उपस्थित रहे। 1894 मे मद्रास मे हुई दसवीं कांग्रेस में भारतीय वित्त विषय पर उन्होंने भाषण दिया और उसकी जांच पडताल की आवश्यकता पर जोर दिया। उन्होंने भारत के राज्यो मे प्रेस की स्वतत्रता को कम करने का भी विरोध किया। 1896 मे कलकत्ता कांग्रेस के दौरान, उन्होंने एक साथ होने वाली परीक्षाओ और भूमि राजस्व के प्रश्नो को उठाया। अगले वर्ष अमरावती कांग्रेस में उन्होंने फ्रटियर (सीमान्त) नीति का विरोध किया। 1898 में मद्रास मे हुए कांग्रेस के चौदहवें सत्र मे फिर इसी बात को दोहराया। एक ऐसी नीति को, जो विदेशों पर आक्रमण और स्वदेश मे दमन की चेतना से प्रोत्साहित है, उन्होंने हानिप्रद और खतरनाक बताया। वह मुद्रा की समस्या पर भी बोले और बताया, "किस प्रकार सरकार केवल लेनदेन पर ही ध्यान देती है, और एग्लोइडियन व्यापारी केवल अपने व्यापार पर ही ध्यान देते है, जनता के बारे में कोई नहीं सोचता, कर चादी मे लगाये जाते है और किसानों को अपनी वस्तुओ का 60% भाग रुपये के घटे मूल्य (मुद्रास्फीति) की पूर्ति के लिए बेचना पडता था।"

1900 में लाहौर में हुई सोलहवीं कांग्रेस मे उन्होंने बारबार पडने वाले अकाल के बारे मे जांच करने की मांग की। उन्होने सार्वजनिक सेवाओ

से भारतीयों को वंचित करने की भी चर्चा की। अगले वर्ष कलकत्ता सत्र मे वह किसानों की दुखदायी दशा पर भी बोले। उन्होंने औद्योगिक स्वतंत्रता पर भी तर्कपूर्ण विचार प्रकट किये और तकनीकी संस्थानों की स्थापना, वैदेशिक छात्रवृत्तियों और स्वदेशी उद्योग के सर्वेक्षण के लिए भी व्यावहारिक सुझाव दिये।

1902 के अहमदाबाद कांग्रेस मे उन्होंने एक बार फिर जनता की गरीबी पर भाषण दिया और बताया कि एक समय था, "जब भारत की जनता इतनी खुशहाल थी कि विदेशी यात्री इससे ईर्ष्या करते थे। उस समय कलाए और उद्योग अत्यंत विकसित थे। ईस्ट इंडिया कम्पनी ने भलीभांति विचार कर भारत को इंग्लैंड के व्यापारिक लाभ पर न्यौछावर कर दिया, उद्योगो को हतोत्साहित किया और कृषि को प्रोत्साहन दिया, ताकि भारत इंग्लैंड के उत्पादन मे लगे उद्योगों के लिए कच्चा माल तैयार करता रहे। यह नीति भारतीय उद्योग को नष्ट कर चुकी है और सरकार, जिसने इसे पैतृक सम्पत्ति के रूप मे पाया था, को फिर से पुरानी स्थिति पर लौटना चाहिए। कोलार मे सोने की खानों मे यूरोपीय पूंजीपतियो द्वारा काम किया जा रहा है। वे प्रतिवर्ष 20 करोड़ रुपये की लागत का सोना पैदा करते है, जिसे विदेश ले जाया जाता है। जब अगले 20 या 30 वर्षों में सारा सोना निकाल लिया जायेगा और दूर ले जाया जायेगा, तो मैसूर के लोगों के लिए पत्थर के अलावा और क्या बचेगा? सरकार को भारतीय सम्पत्ति की रक्षा करनी चाहिए और उसे ले जाने की अनुमति नही देनी चाहिए।"

कांग्रेस के इतिहास लेखक डॉ० पट्टाभिसीतारमैया, उन्हें अपने समय का सबसे बडा निडर तथा दूरदर्शी राजनीतिज्ञ मानते हैं, जो भावी पीढी की कृतज्ञता के अधिकारी है।

सुब्रह्मण्यम अय्यर ने एक बार कांग्रेस के बारे में कहा था, "यदि कांग्रेस ने कुछ भी वह कार्य नहीं किया, जिसके लिए इसने भारत के आधुनिक इतिहास मे स्थायी स्थान बनाया है, तो इसने इतना तो किया ही, जिससे भारतीय जनता अपने महापुरुषों की खोज कर सकी और उन्हे अपनी बहुमूल्य सम्पत्ति के रूप में प्यार कर सकी। इसने भारतीय जनता को सीखी जा सकने वाली शिक्षाओं में से जो सर्वोत्तम शिक्षा दी, वह थी—आत्मसम्मान की शिक्षा।

इसके अतिरिक्त यह हमारे शासको को हमारी पूर्ण नैतिकता और हमारी जाति के बौद्धिक सामार्थ्य के बारे मे कुछ जानकारी दे सकी, जिसे वे अभी तक अर्ध-सभ्य, बेजोड अणुओ के पुज के रूप मे ही जान पाये थे, किन्तु जिनका वे अवश्य आदर और सम्मान कर सकते। अन्तत भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस एक सजीव प्रतिरूप और भारत की एकता का प्रमाण है और इसके भविष्य की आशा और गारटी है।

वह चाहते थे कि जनता के सभी वर्गो के लोग राजनीति में सक्रिय भाग ले और इस तरह काग्रेस आदोलन को बलशाली बनाए। अध्यापन व्यवसाय मे काग्रेस की लोकप्रियता से मद्रास सरकार चौकन्नी हो गई थी। सरकार ने सहायक अनुदान सहिता में सशोधन किया, जिसमें सहायता प्राप्त स्कूलो और कालेजों के शिक्षको तथा प्रबधकों को किसी भी राजनैतिक आदोलन और प्रदर्शन में बिना डायरेक्टर आफ पब्लिक इंस्ट्रक्सन की पूर्व स्वीकृति के प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप मे भाग लेने की मनाही की गई थी। मद्रास मे हुई एक बैठक में सुब्रह्मण्यम अय्यर ने सरकार को नई सहिता के विरुद्ध चेतावनी दी, उन्होने बताया कि शिक्षक सरकार और जनता के बीच सबध बनाये रखने के सर्वोत्तम साधन है और यदि उन्हे राजनीति मे भाग लेने की मनाही होगी, तो इसमे अवाछित तत्व घुस जायेगे। बैठक ने नई सहिता का विरोध किया और इस परिवर्तन के विरुद्ध सरकार को ज्ञापन दिया।

सुब्रह्मण्यम अय्यर ने यह डर भी व्यक्त किया कि यह परिवर्तन की शुरूआत हो सकती है और सरकार प्रतिबध के अतर्गत जनता के अन्य वर्गों, जो उससे वित्तीय सहायता पाते है, को भी ला सकती है। उनका विश्वास था कि राष्ट्र के पुर्ननिर्माण मे विद्यार्थी धुरी की सी भूमिका निभा सकते है। वह चाहते थे कि विद्यार्थी अपने खाली समय का उपयोग ऐसे कामो मे करें, जिनसे समाज को लाभ हो। वह चाहते थे कि पुरानी पीढी के लोग उदाहरण प्रस्तुत करे, ताकि विद्यार्थी उनका अनुसरण कर सकें।

1914 मे लिखे एक लेख मे उन्होंने बम्बई के स्वैच्छिक संगठन 'स्टूडेंट्स ब्रदरहुड' की प्रशंसा की, जिसने इस प्रेसीडेसी मे अच्छा काम किया था और ऐसे ही संगठन का मद्रास प्रेसीडेसी मे न होने के प्रति असंतोष व्यक्त

किया। उन्होंने बंगाल के छात्रों की भी बहुत प्रशंसा की, जिन्होंने प्राकृतिक विपदाओं, जैसे बाढ़ आदि के समय सहायता कार्य किये और 1905 के स्वदेशी आंदोलन में सक्रिय भाग लिया।

"उपयोगी वस्तुओं का अच्छी तरह इस्तेमाल करो," वह लिखते हैं

"छात्रों में संगठन के अभाव में बहुत-सी उपयोगी सामग्री व्यर्थ चली जाती है। विद्यार्थी अपना खाली समय, जब वे पढ़ाई नहीं कर रहे होते हैं, व्यर्थ की बातों और अनैतिक खेलों में बिताते हैं। एक छात्र चाहे अपने अध्ययन या खेल के प्रति कितना ही समर्पित क्यों न हो, फिर भी वह सप्ताह में कुछ-न-कुछ समय निकाल कर अपने पड़ोसियों की मदद कर सकता है और इस लोक सेवा के कार्य को बर्बादी नहीं कहा जा सकता। अतः शिक्षण का एक उद्देश्य लोक कल्याण के लिए समर्पित होना भी है और यह प्रवृत्ति अत्यधिक शीघ्रता से युवकों के दिमाग में नहीं भरी जा सकती है।"

अपने लेखों और भाषणों के माध्यम से उन्होंने समाज सेवा के लिए मद्रास के विद्यार्थियों को प्रोत्साहित किया।

मृत्यु के उपरांत उन्हें दी गई श्रद्धांजलि से यह स्पष्ट है कि यदि सुब्रह्मण्यम अय्यर के समाज सुधारों पर सुनिश्चित विचार नहीं होते, तो वह भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के अध्यक्ष पद के लिए अवश्य चुन लिए जाते। अपनी पुस्तक 'पूर्व गांधी युग में कांग्रेस और कांग्रेसी (1885 से 1917)' में सर्वश्री बिमान बिहारी मजूमदार और भक्तप्रसाद मजूमदार बताते हैं कि सुब्रह्मण्यम अय्यर का कांग्रेस अध्यक्ष न चुने जाने के "अनेक कारणों में से एक कारण यह भी था कि वह समाज सुधारों पर प्रगतिशील दृष्टिकोण रखते थे, जिनके कारण उन्हें उनके ही गृहप्रांत में या अन्य प्रांतों के पुराणपंथी हलकों में पसंद नहीं किया जाता था। वह जो कुछ कहते, उसे सुदृढ़ता से व्यवहार में लाते थे। उन्होंने अपनी विधवा पुत्री की शादी कर दी। अपने पत्र के माध्यम से उन्होंने जोर दिया कि समाज सुधार के प्रश्न पर कांग्रेस को तटस्थ नहीं रहना चाहिए।" उन्होंने 1891 में सुब्रह्मण्यम अय्यर के द्वारा लिखी गई बात याद दिलाई, "कतिपय समाज सुधारों को प्रधानता देने से, यह (कांग्रेस) अपने राष्ट्रीय चरित्र को संकीर्ण करने का खतरा नहीं उठायेगी। यह राजनीतिज्ञों को विकर्षित नहीं करेगी और यह उन्हें आकर्षित करेगी, जो मुख्यतः

राजनीतिज्ञ नहीं है---यह पूर्णतः सुविधा का ही प्रश्न नहीं । इसका निर्णय अंतत नैतिक कर्तव्य तथा ऐतिहासिक आवश्यकता के आधार पर करना होगा और निर्णय का समय काफी दूर नहीं हो सकता।" किन्तु कांग्रेस अध्यक्ष के लिए उनका न चुना जाना उन्हें संगठन को अपना सर्वोत्तम सहयोग देने से रोक न सका। वह उस शिष्ट मंडल के सदस्य चुने गये जो मद्रास मे सम्पन्न दसवीं कांग्रेस में पारित प्रस्ताव की प्रतिलिपि लार्ड एल्गिन को देने गया था। पाच वर्ष बाद कांग्रेस जिसकी बैठक लखनऊ मे हुई, ने उन्हें अपनी समिति (वर्तमान अखिल भारतीय कांग्रेस समिति का पूर्वरूप) का सदस्य चुन लिया।

वित्तीय, आर्थिक और कृषि संबंधी मामलों मे उन्हें विशेषज्ञ समझा जाता था और उन्होंने अनेक कांग्रेस सम्मेलनो में इन विषयो पर या तो प्रस्ताव रखे या कई प्रस्तावों पर प्रभावशाली ढग से अपना योगदान दिया। जैसे पहले ही कहा जा चुका है कि सुब्रह्मण्यम अय्यर ने बम्बई कांग्रेस सत्र में पहला प्रस्ताव रखा, जिसमें भारतीय प्रशासन के मामलों पर गहराई से विचार करने के लिए एक रॉयल कमीशन की माग की गई थी। उन्हें भारतीय मामलों पर ब्रिटिश संसद के प्रभाव पर बहुत विश्वास था। उनका विचार था कि इस कार्य से नौकरशाही की विचित्र कल्पनाओ मे कमी आयेगी और उस समय भारत के मामलों के बारे में परस्पर विरोधी विचार भी समाप्त हो जायेंगे। वह इंडिया कौंसिल के बारे मे अधिक नहीं सोचते थे, जिनमे सेवानिवृत्त अफसर होते थे और इसकी तुलना ईस्ट इंडिया कम्पनी के बोर्ड आफ डायरेक्टर्स से करते थे जिसे उस समय हटा दिया गया, जब महान विप्लव के उपरांत ब्रिटिश सरकार ने प्रशासन की व्यवस्था अपने हाथो मे लेली थी। वह चाहते थे कि अंग्रेजों के सार्वजनिक जीवन निर्माण मे लगे सर्वोत्तम बुद्धिजीवी स्वयं भारतीय मामलों मे रुचि ले और इसे भारतीय अभिलाषाओ के स्वय चैम्पियन बने लोगो पर न छोडे, जो यथास्थिति बनाये रखना चाहते है।

. .सुब्रह्मण्यम अय्यर 1897 में मद्रास प्रेसीडेंसी के प्रतिनिधि के रूप मे भारतीय व्यय पर 'वेलबाई कमीशन' के सम्मुख गवाही देने के लिए इंग्लैंड गये। यह यात्रा उनके लिए आखें खोलने वाली सिद्ध हुई। जब भी वह इग्लैंड जाते, उनका शिष्टतापूर्वक स्वागत होता और बडी रुचि से उनकी बातें सुनी जाती थीं। मामला वही समाप्त हो जाता था। अंग्रेज लोग

अपने व्यापार और अन्य बातो मे इतने व्यस्त रहते थे कि सुदूर भारत के विषय मे कुछ भी नही सोच पाते थे। उन्हे विदित हुआ कि इंग्लैंड मे पादरी समाज पर असर डालने वाले छोटे-से मामलों पर 30 करोड भारतीयो के मामलो की अपेक्षा ससद मे अधिक ध्यान दिया जाता है।

सुब्रह्मण्यम अय्यर की इंग्लैंड यात्रा के समय महारानी विक्टोरिया की हीरक-जयंती मनाई जा रही थी और उन्होने वहा से अपने पत्र को लगातार समाचार भेजे, जिनमे बताया गया था कि इग्लैड मे भारत के प्रति और उत्सवो के अवसर पर उपस्थित भारतीयो के साथ कैसा अशिष्ट व्यवहार किया जाता है। किसी भी सरकारी उत्सव में एक भी भारतीय नही बुलाया जाता था। भारत के जो लोग उनमे उपस्थित होते वे किसी के प्रतिनिधि न होकर अपने प्रतिनिधि स्वयं होते थे। दक्षिण अफ्रीका में नेटाल जैसे छोटे-से उपनिवेश का प्रतिनिधित्व वहा के प्रधानमत्री ने किया। सुब्रह्मण्यम अय्यर ने लिखा —

'उपनिवेशी प्रधानमत्री' यहां (इग्लैड में) सरकार के अतिथि हैं, जिन्हे केवल लदन मे ही नही, देश के काउन्टी शहरो मे भी दावत दी जाती है, उनका मनोरजन व सम्मान किया जाता है। वस्तुत उनकी वर्तमान नीति इग्लैड को व्यापार मे रियायते दिलाने के लिए इन प्रधान मत्रियों को फुसलाना और उनकी चापलूसी करना है। इन उपनियमो, जो स्वशासी है और जो अपनी स्वाधीनता मे अपने देश के हस्तक्षेप का कडा मुकाबला कर सकते है, के साथ फुसलाने और चापलूसी करने की यही नीति सफल होगी। किन्तु भारत तो गुलाम देश है और उसके हितो तथा भावनाओं के साथ शासक देश की विनम्र इच्छा के अनुसार खिलवाड की जा सकती है और उन्हे नष्ट किया जा सकता है। इंग्लैड इसीलिए भारत को लाभ पहुचाने की ओर कोई ध्यान नही देता है और उसके राजनीतिज्ञ इस स्मरणीय अवसर पर लदन मे विद्यमान भारतीयों की उपेक्षा करके उनके अपमानजनक घावों पर नमक छिडक रहे है . . ।"

प्रिस आफ वेल्स ने इम्पीरियल सस्थान मे वहा आये प्रधान मंत्रियों को रात्रि भोजन दिया। भारत से कोई भी आमंत्रित नहीं किया गया, जबकि भारत इस सस्थान की व्यवस्था के लिए धन देता था। सुब्रह्मण्यम अय्यर

ने इसे एक 'खर्चीली सजावट' और 'एक बडा धोखा' बताया । उन्होने कहा कि भारतीयो को इससे अलग कर दिया गया, जबकि प्रिंस यह आशा करते है कि संस्थान, "केवल हमारे महान उपनिवेशो को ही आपसी सद्भावना और भाइचारे के बधनसूत्र मे नही बाधेगा, बल्कि हमारे भारतीय साम्राज्य को भी बाधेगा।" सुब्रह्मण्यम अय्यर ने 'हिन्दू' के पाठको को बताया कि उपनिवेशों ने अपनी मातृभूमि के लिए कुछ भी नही किया, जबकि अपने भारतीय साम्राज्य के बिना इग्लैंड कभी भी विश्वशक्ति नही बन सकता था ।

लार्ड वेलबाई की अध्यक्षता मे सार्वजनिक व्यय पर रॉयल कमीशन के सामने गैर सरकारी साक्षी के रूप में मूल्यवान गवाही देने के अलावा, उन्होने इग्लैंड मे कई सभाओं को सबोधित किया। भारत लौटने पर उन्होने भारतीयो को सलाह दी कि वे अग्रेज अधिकारियो से सम्बन्ध बनाकर रखने के प्रयास करे और ऐसे नये प्रयत्न करे, जिससे राजनीतिज्ञ स्वय भारतीय मामलो मे रुचि लेने लगे। उन्होने स्वीकार किया कि यह एक कठिन कार्य है। वेलबाई कमीशन के सामने दी गई उनकी गवाही को देश मे 'एग्लोइंडियन प्रेस' के हाथो कटु आलोचना की गई। दादाभाई नौरोजी और विलियम वैडरबर्न, जो जांच-पडताल से सबधित थे, ने विचार व्यक्त किये कि सुब्रह्मण्यम अय्यर ने अपने आपको 'पूंजीवादिता' से उऋण कर लिया है। लार्ड वेलबाई जो स्वय नौकरशाह थे, को आयोग के अधिकारियों के विचारो से सहमत होने के लिए झुकना पडा, जबकि गैर-सरकारी सदस्य उसी तरह नौकरशाही कवच मे छेद करने को कृतसकल्प थे।

सुब्रह्मण्यम अय्यर की साक्षी पुलिस प्रशासन से रेल निर्माण तक और सर्वोच्च सरकार और प्रातो के बीच वित्तीय शक्तियो के बटवारे से लेकर भारत से इग्लैंड जाने वाले धन की निरंतर निकासी तक व्यापक क्षेत्र में फैली हुई थी। उन्होने फिजूलखर्ची की जबरदस्त आलोचना की और चाहा कि मिलिट्री बिल मे तीव्र कमी की जाए। उन्होने इसकी ओर संकेत किया कि भारत को ब्रिटेन की साम्राज्यवादी अभिलाषा की पूर्ति के लिए धन देना पडता है। इस सबध में उन्होने सर्वोच्च सरकार (भारत मे) के इस व्यवहार पर भी तीखा प्रहार किया कि वह प्रातो द्वारा की गई बचतो का उपयोग अपने लिए करती है, वह चाहते थे कि राजस्व को सर्वोच्च सरकार और

प्रांतो मे विभाजित किया जाए और अवांछित व्यय को रोकने के लिए बजट पर बहस करने और मत देने का अधिकार दिया जाए। वह भारतीय व्यय नियंत्रण हेतु संसदीय समिति बनाने के पक्ष मे थे।

उन्होने अंग्रेजों के इस विचार का खंडन किया कि अकाल की पीड़ाओं का रेलवे निवारण करेगा, क्योंकि इसके द्वारा अनाज को देश के अंदरूनी भागों मे ले जाया जा सकता है। वस्तुत रेलवे अब स्वतंत्र भारत की सम्पत्ति है, किन्तु दूसरी ओर सुब्रह्मण्यम अय्यर उस समय ठीक ही पदक की ओर संकेत कर रहे थे। उन्होंने अपना यह डर व्यक्त किया कि नई बनी रेल लाइनें मशीन से बने विदेशी माल को देश के अंदरूनी भागो मे ले जाकर ग्रामोद्योग को नष्ट कर देंगी और वह सोचते थे कि रेल लाइनें अभी तक के दुर्गम क्षेत्रों से कच्चा माल लाकर बन्दरगाहों तक पहुंचायेंगी, जहा से उसे आगे इंग्लैंड भेजा जायेगा। उससे ब्रिटिश उद्योगो को सहायता मिलेगी। रेलवे निर्माण की वित्तीय उलझनों के संबध मे सुब्रह्मण्यम अय्यर ने कमीशन को बताया कि धन अंग्रेज साहूकारो से उधार लिया गया था और भारत सरकार पूंजी को आकर्षित करने के लिए लाभ की गारंटी दे रही थी। उन्होंने जोर देकर कहा कि पूंजी और ब्याज दोनों का निकास भारत से बाहर किया जा रहा है। अंग्रेजो ने विभिन्न रेलवे कम्पनियों मे अपने लिए उच्च पद रखे हुए थे और भारतीयो को छोटी नौकरी पर ही संतोष करना पडता था। उन्होंने बताया कि अकाल के निवारण का एकमात्र उपाय सिंचाई परियोजना शुरू करना है. रेलवे लाईनें बिछाना नही, ये तीव्र उद्घोषणाएं भारत और इंग्लैंड दोनों में ही अंग्रेज अधिकारियो को पसंद नहीं थी। उन्होंने यह भी तर्क दिया कि इंडिया आफिस मे एक या दो भारतीयों को शामिल किया जाना चाहिए और उन्हे वाइसराय की कार्यकारी परिषद के गैर सरकारी भारतीयो द्वारा चुने जाने चाहिए। वह सदस्यों की अवधि दस वर्ष से घटाकर पांच वर्ष करना चाहते थे।

राष्ट्रीय आंदोलन ने राजनैतिक नेता उत्पन्न किये, जिनमे से कुछ सुब्रह्मण्यम अय्यर से भी अधिक प्रसिद्ध थे, किन्तु आर्थिक राष्ट्रवाद पर लिखने और बोलने वालों मे उनकी बराबरी बहुत कम लोग कर पाते थे। सी० वाई० चिन्तामणि भी ऐसे ही व्यक्ति थे। गोखले जैसे आदमी ने स्वयं कहा, "भारत में ऐसा कोई संपादक नही है, जिसे जनता की समस्याओ की इतनी

पकड़ रही हो, जैसी सुब्रह्मण्यम अय्यर को थी। 'हिन्दू' को छोडने के उपरांत उन्होंने एक साप्ताहिक पत्र 'यूनाइटेड इंडिया' शुरू किया, जिसमे देश की आर्थिक समस्याओं को अधिकारिक ढग से उठाया जाता था। उन्होंने 1903 मे एक पुस्तक लिखी—'भारत मे अंग्रेजी शासन के कुछ आर्थिक पहलू', जिसमें उन्होंने भारत की अर्थव्यवस्था के दोषों का सरल ढग से विश्लेषण किया। देश की राजनैतिक मुक्ति के एकदम बाद, उन्होंने देश की ग्रामीण जनता की दुःखदायी स्थिति के विश्लेषण पर ही अधिक समय लगाया और अपनी सम्मति प्रकट की "यह विदेशी शासन का ही परिणाम है।" महाजन सभा ने रैयत की आर्थिक दशा पर एक सर्वेक्षण किया और सुब्रह्मण्यम अय्यर व पी० आनन्द चार्लु ने उस कार्य में अग्रणी भूमिका निभायी थी। उन्होंने राजस्व विभाग की इसलिए निन्दा की कि उसने किसानो की भुगतान करने की क्षमता देखे बिना भूमि का लगान बढ़ा दिया। भारत मे अंग्रेज अधिकारी यह समझते थे कि कृषि उत्पादनो की कीमते बढ जाने से किसान समृद्ध बनते जा रहे है। ऊपर बताई पुस्तक मे सुब्रह्मण्यम अय्यर ने बताया कि यह बिचौलिया है, जो लाभ समेटता है और किसान पहले की तरह आज भी गरीब ही बना रह गया है।" अधिकाश मामलो मे, उन्होंने लिखा, "किसान अपनी उत्पादित वस्तुओं की बिक्री के लिए अपना समय और अपनी शर्तों का चुनाव नही कर पाते।" बहुसख्यक जनता इतनी गरीब है कि भूमि की पैदावार से साल मे कुछ ही महीने तक कठिनाई से उनके परिवार का भरणपोषण हो पाता है। इस कमी को वे गाव या निकटवर्ती नगरो मे जाकर और मजदूरी करके पूरा करते है। इसलिए रैयत (किसान) अपने उत्पादन से अपनी एव अपने परिवार की आवश्यकताओं की पूर्ति के साथ-साथ साहूकारो की मागो को पूरा नही कर पाते। किसान एक या प्रायः दोनों प्रयोजनों के लिए ब्याज की सूदखोरी दर पर रुपया उधार लेते है, जो कुछ भी पैदावर उसके पास होती है, उसे बेचने का जब वह विचार करता है, सरकार व साहूकारो का दबाव अधिक पडने पर उसे बन्दरगाहो या पडोसी नगरों मे कतिपय मौसम मे प्रचलित दामो पर बेच देते है। प्रश्न उठता है कि बढे हुए दामों के फलस्वरूप हुए उत्पादक के लाभ को कौन छीन लेता है? उत्तर है, कुछ भाग को साहूकार और कुछ को बिचौलिया, जो गाव वालो से अनाज खरीदता है और उसे ऐसे समय में बेचता है, जब बाजार भाव तेज हो।

सुब्रह्मण्यम अय्यर ने भारतीय अर्थव्यवस्था पर मानसून के विनाशकारी दबाव को शिथिल करने के लिए गैर-कृषि आधारित उद्योगो का समर्थन किया। इसमें उन्हे अंग्रेजों के निहित स्वार्थो के विरुद्ध खड़ा होना पडा जो भारत को सस्ते कच्चे माल का निर्माता बनाये रखना चाहते थे। 1905 के बगाल विभाजन ने भारत मे आर्थिक राष्ट्रीयता को एक अतिरिक्त गति प्रदान की। विदेशी वस्तुओ की मांग हो रही थी। सुब्रह्मण्यम अय्यर ने इस नई चेतना की सराहना की और कहा कि स्वदेशीवाद—केवल भारत की औद्योगिक दासता का ही विरोध प्रदर्शन नही है, अपितु, वर्तमान निर्भरता और अधीनस्थता का भी विरोध है—राजनीतिक सुधार इस दिशा मे कम-से-कम विरोध का पहला काम है। तब आते है समाज सुधार आदोलन और औद्योगिक पुनर्जागरण आंदोलन।

सुब्रह्मण्यम अय्यर का कोई महत्व न होता, यदि वह हमारी आर्थिक समस्याओं को हल करने के लिए अपने ज्ञान और व्यावहारिकता का प्रयोग न करते। जब सुप्रसिद्ध बैंकिंग फर्म, अर्बुथनॉट एड कम्पनी असफल हो गई और भारतीयो ने अपने जीवन भर की बचत खो दी, तो उन्होंने भारतीय बैंकिग सस्थाओ को प्रारंभ कर और उनका विकास करने के महत्व पर जोर देने के अवसर को हाथ मे लिया। उन्होने बताया कि ऐसे सस्थान स्वदेशी आदोलन को सफल बनाने मे अपना योगदान देगे और सरकारी बैंकिग अपनाने से जमा किये धन की सुरक्षा सुनिश्चित की जा सकेगी। 'इडियन रिव्यू' मे दिये गये अपने लेख में उन्होने लिखा :—

"हमें सहकारिता के शक्तिशाली अस्त्र का प्रयोग करना सीखना चाहिए आपसी विश्वास पद्धति का प्रारम्भ करना चाहिए, जिसे क्रेडिट कहा जाता है। हमारे प्रगति के स्वरूप जो भी हो, हमारा प्रथम प्रयास व कर्तव्य इस क्रेडिट पद्धति का अनुशीलन व विकास करना चाहिए, जो धन के छोटे बिखरे हुए और निर्जीव अणुओ को संगठित व सजीव पूजी मे परिणित कर देगा, जिसमें विस्तार की क्षमता होगी और धन कमाने की क्षमता मे प्रशिक्षण सवृद्धि को बल मिलेगा।

मद्रास मे इडियन बैंक लिमिटेड की स्थापना से बैंकिग मे जनता का फिर से विश्वास जमा।

1905 में मद्रास मे, उन्होने जरूरतमद उद्यमियो को सहायता के लिए राष्ट्रीय निधि की शुरुआत की और सुयोग्य युवको को वैज्ञानिक व तकनीकी प्रशिक्षण के लिए इग्लैंड भेजा। यह निधि स्वदेशी आदोलन का ही परिणाम थी। इस अवसर पर एक अपील मे उन्होंने जनता को कहा कि वह औद्योगिक पुनर्जागरण मे सहयोग देने हेतु इस निधि में वर्ष मे एक बार अवश्य योगदान करे। अपनी सहायता स्वयं करने की आवश्यकता पर जोर देते हुए उन्होंने लिखा, "भारत मे अंग्रेजी शासन के आर्थिक और मालगुजारी नीतियो के जो भी गोपनीय स्रोत रहे हो, इस प्रतिनिधि वर्तमान औद्योगिक दासत्व से छुटकारा दिलाने के हमारे प्रयत्नो की प्रगति का विरोध करने या इसे रोकने का सहास न कर सके। फिर भी कितनी दिशाओ में हमारे द्वारा प्रारम्भ किये गये कार्यों के अनुसरण करने में रुकावटे आई? सभी जगह जनता को विधिवत् अर्हता प्राप्त विशेषज्ञों के बहुत बडे महत्व को समझाया जाना है, जो नये उद्योग प्रारभ कर सके और दिशा-निर्देश कर सके, जिसके लिए देशभर मे पर्याप्त प्राकृतिक सुविधाए विद्यमान है। समझदार और हितैषी सरकार ने हमारे देश मे ऐसे विशेषज्ञ तैयार करने के लिए प्रशिक्षण की कोई व्यवस्था नही की है। जब भी इस सरकार को कुशल कर्मचारियों की आवश्यकता होती है, वह हमारे हर तरह के साधनो के शोषण की अपनी सामान्य नीति के अनुसरण मे इन्हे इग्लैंड से अग्रेजों मे से मगवा लेती है, किन्तु हम चाहते है कि ऐसे कुशल व्यक्ति हमारे अपने देशवासियो मे से हो, जिनमे से सैकड़ों व्यक्तियों को हर साल विदेशो मे उनके सस्थानो मे प्रशिक्षण प्राप्त करने हेतु भेजा जाना चाहिए। वहा से लौटने पर, उन्हे जिस उद्योग मे प्रशिक्षित किया गया है, उसी को शुरू करने के लिए पूजी दी जाए। फिर हम उन असख्य स्वदेशी उद्योगो को आवश्यक प्रोत्साहन और सहायता कैसे दे, जो बिना प्रोत्साहन के सुस्त पडते जा रहे है और जल्दी ही समाप्त हो जायेगे? संक्षेप मे महानतम राष्ट्रीय महत्व के विभिन्न उद्देश्यो की संख्या अत्यधिक है, जिनके लिए राष्ट्रीय निधि सचित की गई---और देश के विभिन्न केन्द्रो में स्थापित की गई, उसे सर्वाधिक प्रभावशाली रूप मे इस्तेमाल किया जाए---इसके लिए मातृभूमि के लिए प्यार, उसके कल्याण हेतु उत्सर्ग, उत्साह और सुदृढ़ शक्ति की आवश्यकता है। ये गुण किसी भी प्रकार से हमारे लोगो मे विशेषत बापीढ़ी मे अनुपस्थित नही है।"

शीघ्र ही 'निधि' सफलता बन गई। हर साल दीपावली के दिन विद्यार्थी और स्वयसेवक 'निधि' संचित करने घर-घर जाते थे। इस आय का उपयोग ऊपर लिखे प्रयोजनो के लिए किया जाता था। यह 'नेशनल फंड एसोशियेशन' अभी तक मद्रास मे विद्यमान है। सुब्रह्मण्यम अय्यर ने लोगो को निधि का उद्देश्य बताने हेतु प्रेसीडेंसी का दौरा किया।

सुब्रह्मण्यम अय्यर स्वदेशी उद्योगों की सुरक्षा और स्वतत्र व्यापार का अस्तित्व चाहते थे। वह अनुभव करते थे कि स्वयं इंग्लैंड द्वारा स्वतत्र व्यापार को अस्वीकृत कर देने से भारत मे अपने तैयार माल को लेकर विदेशी निर्माता की बाढ-सी आ गई है। राज्य संरक्षण के अभाव में विदेशी वाणिज्यिक आक्रमण के सामने देश के नवजात उद्योग टिकने की स्थिति मे नही थे।

1914 में प्रथम विश्वयुद्ध के शुरू होने से जर्मनी और आस्ट्रेलिया द्वारा भारत के लिए किये जाने वाले निर्यात पर बुरा असर पड़ा और इंग्लैंड इसे पूरा करने की स्थिति में न रहा। भारतीय नेतागण और व्यापारिक हित चाहने वाले लोगो की इच्छा थी कि अंग्रेज यहा की जनता को नये उद्योग लगाने मे मदद करे, ताकि कठिनाइया दूर हो सकें, किन्तु इस अपील का कोई परिणाम न निकला।

विदेशी शक्ति पर देश की आर्थिक निर्भरता भारत के संसाधनो के निकास मे घनिष्टतापूर्वक जुडी हुई थी। हर साल अंग्रेजो द्वारा अपने वेतन, अपने पूंजीनिवेशो पर कमाया हुआ लाभ, ऋण देकर उससे मिलने वाले ब्याज के करोड़ों रुपयो की राशि देश के बाहर भेजी जाती थी, जिनकी अदायगी इंग्लैंड मे ही होती थी। दादाभाई नौरोजी ही पहले राष्ट्रीय नेता थे, जिन्होंने 'निकास' सिद्धात को विचारार्थ प्रस्तुत किया और इससे जल्दी ही दूसरों ने भी लाभ उठाया। सुब्रह्मण्यम अय्यर इस सिद्धात के आदर्श अधिवक्ता थे।

उस समय 'होम चार्जेज' थे जिन्हे भारत सरकार के खर्चे के रूप मे इग्लैंड में चुकता करना पडता था। ये प्रतिवर्ष बढ़ते जा रहे थे। 'होम चार्जेज' मे भारतीय सार्वजनिक कर्जे और रेलवे गारटी ब्याज, भारत को भेजा गया सोना और जन-साधारण के लिए संचित सामग्री के मूल्य का भुगतान,

इंग्लैंड मे भारत के खाते में भुगतान किये गये सिविल और सेना प्रभार, जिसमे राज्य सचिव के रख-रखाव का खर्चा और भारत सरकार के यूरोपीय अधिकारियों के पेंशन का भुगतान शामिल है, समाहित है,

मानो ये चीजे पर्याप्त नही थी। भारत सरकार गैर-अधिवासी अंग्रेज अधिकारियो को रुपये की सोने की लागत में रुकावट के संतुलन को बनाये रखने के लिए घृणास्पद विनिमय क्षतिपूर्ति भत्ता दिया करती थी। यह विशेषाधिकार प्राप्त 1 शिलिंग 6 पेंस प्रति रुपये की विनिमय दर थी, ताकि वे रुपये के पहले मूल्य पर धन इंग्लैंड भेज सकें। इसका अभिप्राय यह है कि एंग्लोइंडियन अफसर अपने वास्तविक वेतन से अधिक धन पाते थे। यहा तक कि जो लोग धन इंग्लैंड नही भेजते थे, वे भी सरकार के निष्क्रिय सहयोग से इस भत्ते को लेने का दावा करते थे। यह राष्ट्रीय नेताओ के लिए अत्यंत पीडादायक था। 1883 से 1898 तक इस संबंध मे कुल खर्चा लगभग 5 करोड रुपये था।

सेवाओं के भारतीयकरण की माग भी अंशत बचत का कार्य था, क्योंकि भारतीय प्रशासक कर भुगतान हेतु करदाताओ को उतने महंगे नहीं पडते थे, जितने कि उनके ब्रिटिश प्रतिरूप, और वे प्राप्त वेतन को देश के बाहर नही ले जा सकते थे।

समाज सुधार

उन्नीसवी शताब्दी के दौरान भारत के पुनर्जागरण के लिए अनेक आदोलन शुरू हुए, किन्तु जितनी अधिक कठिनाइयो का सामना समाज सुधार के मार्ग मे करना पड़ा उतना अन्य किसी मे नही। इसका कारण यह था कि शिक्षित वर्गो के अधिकाश लोग, जो आदोलन का सक्रिय नेतृत्व कर रहे थे, मच पर से तो समाज सुधार के उपदेश देते, किन्तु अपने घरो मे पुरानी प्रथाओ से चिपके रहते थे। इसलिए आंदोलन को केवल रूढ़िवादियो से ही नही जूझना पड़ा, बल्कि इन सदेहास्पद मित्रो से भी लड़ना पड़ा।

सामान्यत: देश बाल विवाह की समाप्ति, विधवा पुर्नविवाह, नाच विरोधी आदोलन और धीरे-धीरे जातियों के एकीकरण, जो समाज सुधार के प्रधान अग थे, के लिए तैयार नही था। ये भारतीय जीवन पद्धति के अग बन चुके थे और एक पीढी से दूसरी पीढ़ी मे चले आ रहे थे तथा इनका विरोध करना भावनात्मक मदिर को लूटने जैसा समझा जाता था। सयुक्त परिवार प्रथा अत्यंत लोकप्रिय थी और बडो की बात मानी जाती थी, शिक्षित युवा सामाजिक बुराइयों पर भले ही कितना भी भाषण देते रहे हों, किन्तु उनमे बहुत कम ऐसे थे जो अपने बुजुर्गों को समाज सुधार के प्रश्नों पर अपने साथ ला पाये हो।

मद्रास प्रेसीडेंसी में समाज सुधार आदोलन देर से आया। सामान्यत दक्षिण भारतीयो को मुसलमानों के आक्रमणो ने नही छुआ था और वे सामाजिक मामलो में बडी सीमा तक उस हिन्दू जीवन पद्धति को पूरी कट्टरता से सुरक्षित रखे हुए थे, जिसे सुधारक जड से उखाड देना चाहते थे। ईसाई मिशनरियों ने हिन्दू समाज की आत्म-सतोष की भावना को उसकी आस्था मे परिवर्तन लाकर झकझोर कर आगे का रास्ता साफ करने का काम किया। उन्होने प्रचलित सामाजिक हालातों से असंतुष्ट लोगो को हिन्दू धर्म के बाड़े को छोड़कर धर्म परिवर्तित ईसाई के सम्मानित पद पर फूलने-फलने का उपदेश दिया। हिन्दुओ में रूढिवादी लोग अपनी रूढिवादी प्रवृत्ति मे लचीलापन लाने के स्थान पर भविष्य में होने वाले

किसी भी धर्म परिवर्तन के विरुद्ध अपने बचाव के लिए अधिक कटिबद्ध हो गये।

लेकिन प्रत्येक व्यक्ति ने, चाहे वह रूढ़िवादी हो या धर्म विरोधी, धीरे-धीरे अंग्रेजी शिक्षा लेनी शुरू की, क्योंकि यह भाषा-ज्ञान नौकरी पाने का एक प्रकार का पारपत्र था। अंग्रेजी शिक्षा के फैलने से जाति-बंधन टूटने लगे, क्योंकि कार्य को पाने की होड मे अंग्रेजी पढ़े-लिखे एक अछूत और ब्राह्मण को समान अवसर प्राप्त थे। जी सुब्रह्मण्यम अय्यर जैसे समाज सुधारक अंग्रेजी शिक्षा को भगवान की देन मानते थे, क्योंकि इससे उनके काम मे सुविधा होती थी।

राजनैतिक मुक्ति की मांग से ही सामाजिक दशाओं की जाच शुरू हुई। इसका कारण यह था कि अंग्रेज स्व-शासन की स्वीकृति न देने के लिए भारतीयों के सामाजिक पिछड़ेपन का बहाना प्राय. बनाया करते थे। भारतीय नेता इस तथ्य को भलीभाति जानते थे कि वे विदेशी शासकों की मदद के बिना समाज सुधार के कार्य को आगे बढ़ा सकते है। अंग्रेज तो केवल राजनैतिक मुक्ति की स्वीकृति ही दे सकते है, अत समाज सुधार राजनैतिक आदोलन की अनिवार्य शर्त बन गये। फिर भी भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने स्वयं इससे संबध नही रखा, क्योंकि उन दिनों इस प्रश्न पर कांग्रेस जनो मे विचार-ऐक्य न था, किन्तु प्रत्येक कांग्रेस सत्र मे सामाजिक सम्मेलन होता था, जिसमें इस क्षेत्र के कार्यकर्त्ता—उनमे से कुछ सुब्रह्मण्यम अय्यर जैसे यशस्वी कांग्रेसी भी—सम्मिलित होते थे।

दक्षिण में रघुनाथ राव, कदुकुडी वीरेशलिंगम पतुलु और चैतसाल राव ने समाज सुधार के क्षेत्र में पर्याप्त कार्य किया। रघुनाथ राव ने अकेले अपनी बुद्धि से कार्य किया। वह सस्कृत के प्रसिद्ध विद्वान थे। वह प्राय-शास्त्रों के उद्धरण यह सिद्ध करने के लिए दिया करते थे कि शास्त्रों मे विधवा के पुनर्विवाह की स्वीकृति दी गई है। सुब्रह्मण्यम अय्यर रघुनाथ राव को अपना गुरु मानते थे, वीरेशलिंगम ने राजमुंदरी मे 'विधवागृह' की स्थापना की और वह सुब्रह्मण्यम अय्यर के समान ही व्यावहारिक समाज सुधारक थे।

सुब्रह्मण्यम अय्यर का विचार था कि समाज सुधार को वस्तुत यदि आगे नही, तो कम-से-कम राजनैतिक-मुक्ति आंदोलन के साथ-साथ चलना चाहिए। अवसर की समानता से उनका अभिप्राय था, जनता के सभी वर्गों के लोगों की समानता मे केवल कुछ चुने हुए ही नही, बल्कि सबसे निम्न समझे जाने वाले लोग भी सम्मिलित हो। वह बाल-विवाह और 'कट्टर जातिप्रथा' जैसी सामाजिक बुराइयों के कट्टर विरोधी थे। वह चाहते थे कि यदि हिन्दू जाति को जीवित रहना है, तो उसे प्राचीन प्रथाओं को छोड़कर समय के साथ चलना चाहिए।

हिन्दू समाज के सुधार का कार्य अत्यंत कठिन था और वह इसके बारे मे कोई भ्रम नही रखते थे।

1893 मे, "क्या अछूतों की दशा सतोषजनक है" विषय पर बोलते हुए सुब्रह्मण्यम अय्यर ने स्वीकार किया कि जातिप्रथा हिमालय पर्वत की भांति अडिग है। इसे अल्प प्रयास द्वारा नही गिराया जा सकता। तो भी उन्होंने घोषणा की "यह हिमालय पर्वत अवश्य गिराना है। या तो जातिप्रथा को गिराना होगा, नही तो हमे ही गिर जाना होगा।" उन्होंने बताया कि प्रत्येक देश में जाति विकास की किसी एक अवस्था मे आवश्यक संस्था है, हर समाज मे पुरोहित वर्ग हर प्रकार के अधिकारो एव उपलब्धियों पर एकाधिकार का अनुचित दावा करता है। फिर भी उद्योगी और पुरुषार्थी वर्गों ने स्वयं को धक्का देकर आगे बढ़ाया और सामाजिक पद्धतियों को समायोजित किया। किन्तु भारत में, बजाय इसके कि पुरोहित वर्ग को सामाजिक पद्धति मे उपयुक्त स्थान पर पहुचा दिया जाता। यह उद्योगी और पुरुषार्थी वर्ग खीच कर अपने स्तर पर ले आया। अत. विदेशी प्रभाव के प्रथम स्पर्श से ही समाज अस्थिर हो गया और ब्राह्मण ढांचा टूट गया। यदि हम अपनी पुरानी प्रथाओं को आधुनिक परिवेश एव आवश्यकता के अनुकूल बनाने के लिए नही बदलते हैं, तो जो क्षति शुरू हो गई है—उनके अनुसार, जातिप्रथा ने उच्च नैतिक भावनाओं, हिन्दुओं के सदाचरण की प्रकृति और उस दैवी भावना, जन्म या पद से निरपेक्ष मानव की मानव के प्रति कर्तव्य की भावना का दमन करने में योगदान किया है।

उन्होने सामाजिक प्रतिष्ठा का आधार बनी हुई 'जाति' को सबके लिए 'समानता' के द्वारा बदलने की और कार्य संचालिक 'प्रथा' के

5—4 M of I&B/ND/84

स्थान पर तर्क और सहानुभूति प्रतिस्थापित करने की वकालत की। सुब्रह्मण्यम अय्यर महसूस करते थे कि परिवर्तन शातिपूर्वक तथा धीरे-धीरे नही हो सकता है, क्योकि पुरानी सस्थाओं ने अपने महत्व की जड़े जमाई है, उन्हे समूल उखाडना था, इसके लिए निहित स्वार्थो के प्रचण्ड विरोध का आह्-वान करना था। यूरोपीय सामाजिक विकास के मामले में केवल समायोजन की जरूरत पडती थी और इसकी व्यवस्था चर्च व राज्य द्वारा की जाती थी। ये दोनो बाते भारत मे विद्यमान नही थी, धर्मों व मत-मतातरों की बहुलता के कारण कोई सर्वमान्य चर्च नही था और शासन की शक्ति विदेशियो के हाथो मे थी, जो जनता की राजनीतिक या सामाजिक महत्वाकाक्षाओं मे कोई सहानुभूति नही रखते थे।

फिर भी, सुब्रह्मण्यम अय्यर नहीं सोचते थे कि सामाजिक मामलो पर बहस करने का समय चला गया है। यदि सभव हो, धार्मिक विश्वास के माध्यम से, यदि आवश्यक हुआ तो दबाव से बदलाव हो।

प्रगतिशील समाज-सुधारक होने पर भी उन्होंने कभी भी हिन्दू धर्म को छोडकर समाज सुधार करने का मन मे विचार तक नही आने दिया। वह अंत तक हिन्दू बने रहे और हिन्दू समाज को भीतर से स्वच्छ करने के प्रयास करते रहे। उन्होंने अपने और अपने मित्रों के दृष्टिकोण से, जो उस समय अल्पमत मे था, बहुमत को सहमत करने का प्रयास किया।

एक घरेलू दुखदायी घटना ने सुब्रह्मण्यम अय्यर को समाज सुधारक के रूप मे उनकी विश्वसनीयता सिद्ध करने के लिए परीक्षा का मामला प्रस्तुत किया। उनकी पुत्री शिवप्रियामल ने 13 वर्ष की आयु में ही अपना पति खो दिया। इधर केवल उसके पिता विधवा पुनर्विवाह का प्रचार कर रहे थे। अब उन्हे अपनी बातों को कार्यान्वित करने का अवसर मिला। वह 1889 मे अपनी पुत्री और अपने पसंद के लडके को बम्बई ले गये और वहा उनका विवाह कर दिया। विवाह उसी समय हुआ, जब बम्बई मे कांग्रेस सम्मेलन हो रहा था। भिन्न मतावलम्बी चार्ल्स ब्रेडलॉफ, सर विलियम वेडरबर्न और रानडे जैसे कुछ गण्यमान्य महानुभाव पश्चिमी भारत मे विधवा पुनर्विवाह के महान नेता माधवदास रघुनाथ राव के घर में हुए विवाह उत्सव मे सम्मिलित हुए। रघुनाथ राव ने उत्सव मे अधिकारी

का काम किया। विवाह के बिल्कुल अप्रत्याशित परिणाम सामने आये। सुब्रह्मण्यम अय्यर के परिवार का, जैसी कि उम्मीद थी, परम्परागत रूप से सामाजिक बहिष्कार किया गया, किन्तु छोटे अपराधों के प्रति आग उगलने वाला रूढिवादी वर्ग उन्हें उस समय जाति से बहिष्कृत करने का साहस न कर सका, जब नवविवाहित दम्पत्ति ने उनके घर में आश्रय लिया। विवाह के चार माह बाद श्रीमती सुब्रह्मण्यम अय्यर चल बसी। दाह सस्कार के समय कोई परेशानी नही हुई और पत्रों की रिपोर्टों में जनता के व्यवहार मे पूरा बदलाव पाया गया। सुब्रह्मण्यम अय्यर की अपनी ही जाति के एक पुरोहित ने क्रियाकर्म किया और उनकी स्वर्गीय पत्नी के सबधी भी उसमें उपस्थित थे।

सुब्रह्मण्यम अय्यर ने महिलाओं के कल्याण के लिए साहसपूर्ण संघर्ष किया। वह लड़कियों की विवाह योग्य आयु बढ़ाने के पक्ष में थे। उन्होंने मैसूर सरकार द्वारा महिलाओं पर प्रभाव डालने वाले प्रगतिशील विधान बनाये जाने का स्वागत किया और वह चाहते थे कि उसका हमारे देश के अन्य राजकुमार भी अनुसरण करे। उनका विचार था कि स्त्रियों की उचित शिक्षा पर ही सामाजिक प्रगति निर्भर है। उन्होंने सोचा कि उस शिक्षा प्रणाली के तहत महिलाओं को प्रशिक्षित करना बेकार है, जो प्राथमिक व पूर्ण रूप से दूध और पानी की तरह देश के अन्दर व्याप्त है और जिसके बारे में लोग सोचते है कि यही ठीक है। वह आगे कहते हैं, "मेरा अपना विचार है कि उनकी शिक्षा उतनी ही उच्च, वैज्ञानिक और शक्तिप्रद होनी चाहिए, जितनी कि पुरुषों की।"

वह चाहते थे कि आधुनिक भारतीय महिला समाज में उसी सम्मानित पद को प्राप्त करें, जो उनकी मां-बहनों को मुसलमानों के आगमान से पूर्व प्राप्त था। उन्होंने घोषणा की, "पुरुषों को महिलाओं की समाज में स्थिति विषय पर बहस करने और उसे निश्चित करने का कोई अधिकार नही है। किन्तु इस सबध में महिलाओं को स्वय विचार करना चाहिए...। यदि केवल पुरुष ही महिलाओं का दिमाग खोलेंगे और उनकी बुद्धिमत्ता का विकास करेंगे, तो यह पता नही चल पाएगा कि वे कौन से स्थान को नही भर सकती है और कौन से कार्यों को आत्मविश्वास से नही कर सकती हैं।"

समाज सुधार का कार्य आगे बढाने के लिए उन्होने 'हिन्दू समाज सुधार संस्था' बनाई, जिसका सम्पर्क देश के दूसरे भागो मे उन जैसी सस्थाओं से बना रहता था । जैसा पहले ही कहा जा चुका है, उन्होंने 'इंडियन सोशल रिफार्मर' का मार्गदर्शन किया, जिसका सचालन मद्रास मे उनके कनिष्ठ के० नटराजन और के० सुब्बा राव करते थे। जब सुब्बा-राव इस पत्रिका को बम्बई ले गये, तो मद्रास मे उस आंदोलन का अपना कोई पत्र नही रह गया था। अत 'इडियन सोशल रिफार्मर' के उत्तराधिकारी के रूप में 'सोशल रिफार्म एडवोकेट' की सस्थापना की गई।

'हिन्दू सोशल रिफार्म एसोशियेसन' का बहुमुखी प्रभाव था। इसने समाज की प्रगति में आस्था रखने वाले व्यक्तियों को एक सामूहिक मंच पर एकत्रित किया । ऐसोशियेसन के सदस्यों को वचन देना पड़ता था कि वे अपनी कन्याओं और घर की स्त्रियो को शिक्षित करेगे और अपनी बहनों पुत्रियो का विवाह बारह साल की आयु से पहले नही करेगे। कई अवसरों पर महिलाओं के लिए भाषणो का प्रबंध भी किया जाता था । ऐसोशियेसन ने गाने-बजाने का धंधा करने वाली महिलाओ और वेश्यावृत्ति के विरुद्ध प्रबल आदोलन छेडा। सस्था ने एक सार्वजनिक सभा का आयोजन किया, जिसमे उच्च पदासीन अग्रेज पदाधिकारियो से अपील की, कि वे उन सामाजिक उत्सवों मे भाग न ले, जिनमें नाचने-गाने वाली औरतें मेहमानों का मनोरंजन करती है।

ऐसोशियेसन ने सरकार से भी यह अनुरोध किया कि वे उन भारतीयों को विधान परिषदों में न भेजें, जो गिरे हुए चरित्रवाली औरतों को आश्रय देते हैं।

राजनीतिक विषयों के लेखक के रूप मे सुब्रह्मण्यम अय्यर चाहते थे कि प्रेस को समाज के कमजोर वर्गों के हितो के लिए आगे आना चाहिए और समय के साथ चलते हुए सामाजिक बदलाव की प्रक्रिया को तीव्र बनाना चाहिए। 1903 मे 'हिन्दू' की रजत जयंती समारोह के अवसर पर बोलते हुए उन्होंने कहा, "मेरे शिक्षित देशवासियो इस तथ्य को अपने मन मे बनाए रखो कि बीता हुआ समय इतना महत्व-पूर्ण नहीं है, जितना कि वर्तमान, न ही वर्तमान इतना महत्वपूर्ण है, जितना

भविष्य। इसलिए मैं प्रार्थना करता हूं और चाहता हूं कि 'हिन्दू' अपनी उस नीति से न हटे, जिसका इसने प्रारम्भ से ही अनुसरण किया है और केवल राजनीतिक हालातों के संबंध में ही नहीं, बल्कि सभी सामाजिक और भौतिक उन्नति पर विचार व्यक्त करता रहे और इस क्षेत्र में नेतृत्व करता रहे। परिवर्तन, सुधार तथा प्रगति ही किसी राष्ट्र के जीवन का निर्माण करते हैं।"

समाज सुधारक होने का उनका दावा बहुत कुछ इस तथ्य पर निर्भर है कि उन्होंने मद्रास प्रेसीडेंसी के दक्षिणी भाग में एक व्यावहारिक उदाहरण प्रस्तुत किया। अपनी पुत्री का पुनर्विवाह करके उन्होंने निष्कर्षतः सिद्ध किया, यदि किसी उदाहरण की जरूरत हो कि उन्होंने अपने वचनों को कार्यरूप देने में कोई संकोच नहीं किया। उस समय अधिकांश सुधारक मंच के प्रचंड प्रवक्ता थे, किन्तु उनमें से बहुत कम ऐसे थे जो अपने उपदेशों को व्यवहार में लाए हों।

अपनी पुत्री के मामले में सुब्रह्मण्यम अय्यर के कार्य ने दक्षिण में समाज सुधार आंदोलन को तीव्रता से आगे बढ़ाया। मद्रास प्रेसीडेंसी में पहले कभी उन जैसा योग्य व्यक्ति नहीं हुआ, जिसने सामाजिक रूढ़िवाद के मार्ग से अपने को अलग कर लिया हो। समाज सुधार के क्षेत्र में उनके पूर्वज अज्ञात थे। 'हिन्दू' और 'स्वदेशमित्रन्' के सम्पादक के रूप में और अग्रणी राजनीतिज्ञ के रूप में उन्होंने जो संतुलित प्रभाव डाला, वह किसी भी प्रकार से दक्षिण तक ही सीमित न था। उनके कार्य ने उनकी स्थिति में कार्यरत अन्य समाज सुधारकों के मन में साहस का संचार किया। उन्हें संतोष था कि यदि वह कोई पाप कर रहे हैं, तो अकेले नहीं, बल्कि एक विशद् सत्संगति में ऐसा कर रहे हैं।

पारिवारिक जीवन

हम अब सुब्रह्मण्यम अय्यर के व्यक्तिगत एवं पारिवारिक जीवन के सूत्रों को पकड़ने के लिए लौट आएं। यह उनका सौभाग्य था कि उनकी पत्नी मीनाक्षी उन्हीं की तरह यथेष्ट साहसी और धैर्यशील नारी थीं। उनको एक पुत्र और तीन पुत्रियां थीं। पुत्र, टी० एस० विश्वनाथ अय्यर का जन्म अगस्त 1887 मे हुआ। 'स्वदेशमित्रन' मे उनका जीवन कार्य के लिए एक लम्बा प्रशिक्षण बन चुका था। जब 1908 के लगभग सुब्रह्मण्यम अय्यर ने राजनैतिक जीवन से संन्यास ले लिया, तो उनके पुत्र ही इसकी देखरेख करते थे। सुब्रह्मण्यम अय्यर ने पत्र का सम्पादन ए० रंगास्वामी आयंगर को सौंपा, जिन्होंने 1905 में 'स्वदेशमित्रन्' प्रेस खरीदा। रंगास्वामी आयंगर ने विश्वनाथ अय्यर को पत्र का महा-प्रबंधक नियुक्त किया और वह स्वयं मुद्रक और प्रकाशक बने। इन दोनों पदों पर वह अपनी सेवा निवृत्ति के समय 1947 तक रहे। विश्वनाथ अय्यर जुलाई 19, 1948 में चल बसे।

सुब्रह्मण्यम अय्यर की तीन पुत्रियां थीं। सिवप्रिया से उनकी गहरी ममता थी, क्योंकि बचपन में ही उसका जीवन दुःखमय बन गया था, कम्लाम्बल जिसका विवाह एल०ए० जगदीश अय्यर एडवोकेट और वनानाम्बल जिसका विवाह सी० एस० बालासुन्दरम् अय्यर से हुआ, जो महामहिम महाराजा मैसूर की कार्यकारी परिषद के द्वितीय सदस्य बने।

सिवप्रिया का विवाह बहुत छोटी उम्र में हो गया था, किन्तु उसका किशोर पति एक वर्ष बाद टायफाइड से मर गया। सुब्रह्मण्यम अय्यर उस समय दक्षिण के दौरे पर थे। इस दुखद समाचार को सुनकर वह स्तंभित रह गये। उन्होंने जल्दी ही अपने मन में सिवप्रिया का पुनर्विवाह करने का फैसला कर लिया। (जैसा कि पहले उल्लेख किया जा चुका है) 31 दिसम्बर, 1889 को बम्बई में उसका पुनर्विवाह सम्पन्न हुआ, किन्तु सिवप्रिया और उसके (द्वितीय) पति सुब्रह्मण्यम अय्यर और उनके परिवार के साथ ही रहने लगे।

उसकी मा मीनाक्षी उसके विवाह के कुछ समय उपरांत 25 अप्रैल, 1890 को स्वर्ग सिधार गई। उसके उपरांत सुब्रह्मण्यम अय्यर के घर का सारा कार्यभार सिवप्रिया ने अपनी मृत्युपर्यन्त 7 दिसम्बर 1899 तक सभाले रखा। जब वह मरी तो उसकी आयु केवल 22 वर्ष थी। अपने पिता की देखभाल करने और लम्बी बीमारी के दौरान अपने पति की सेवा सुश्रूषा करनें के कारण उसकी बड़ी प्रशंसा की जाती थी। हिन्दू में छपी मृत्यु समाचार टिप्पणी के अनुसार वह अपने पिता की उपासिका थी, अपनी पुत्री के लिए पिछले दस वर्षो से विलक्षण त्याग व उत्सर्ग किया था, उसके लिए वह उनके प्रति अत्यंत विनम्रता और सर्वोत्तम प्यार की भावना रखती थी।

प्रेमपूर्ण श्रम

पत्रकारिता को अपने जीवन में बहुत पहले से ही सुब्रह्मण्यम अय्यर महसूस करते थे कि अंग्रेजी भाषा न जानने वाली तमिल भाषी जनता को शिक्षित बनाने हेतु, तमिल भाषा पत्रिका शुरू करने की आवश्यकता है। फलस्वरूप 1882 में 'स्वदेशमित्रन्' साप्ताहिक की स्थापना हुई।

उन जैसे राजनैतिक विषयों के साहसी लेखक के लिए भी यह कठोर साहसिक कार्य था, किन्तु वह इसे प्यार का पुरुषार्थ मानते थे। यह समझने में वह पर्याप्त दूरदर्शी थे कि विशेष अवसरों पर साधारण नागरिक तो अपने आप आ जाते हैं और मध्य वर्गों के शिक्षित लोग हमेशा राष्ट्रीय आंदोलन के सिरोपरी नहीं हो सकते. फिर भी यह साहस का कार्य बिना नक्शे के समुद्री यात्रा करना जैसा था। कोई ऐसा उदाहरण भी न था, जिसका सम्पादक अनुसरण कर सकता। उन्हें कामचलाऊ प्रबंध करना पड़ा। नि:संदेह 'हिन्दू' में प्राप्त उनका अनुभव काम आया। वहां उन्होंने समाचार पत्र का संचालन करना सीखा था। फिर भी उन्होंने जो काम हाथ मे लिया था, वह बड़ा विकट था। अंग्रेजी पत्र अपने पाठकों को पृष्ठभूमि की बहुत कुछ जानकारी देते थे, मातृभाषा के पत्र ऐसा नहीं कर सकते थे, क्योंकि उनके पाठक अनपढ़ होते थे और समाचार पत्र उन्हें पढ़कर सुनाया जाता था। 'स्वदेशमित्रन्' पत्र अति साधारण लोगों के लिए था, जिनका अंग्रजी का ज्ञान नगण्य था तथा 'हिन्दू' के पूरक के रूप मे न था।

ऐसे पाठकों के लिए सुबोध तमिल में समाचार प्रस्तुत करना किसी भी प्रकार सरल काम न था। उन्हें ऐसे शब्द गढ़ने पड़ते थे जो सरलता से समझ मे आ सकें। उन्हें तमिल 'डितों ए' भाषा की शुद्धता पर अधिक ध्यान देने वाले शुद्धतावादियों के विरोध का सामना करना पड़ा। ऐसे लोगो को प्रभावशाली ढंग से पराजित कर दिया गया। सुब्रह्मण्यम अय्यर ने सुपरिचित अंग्रेजी शब्दों, जैसे गवर्नमेंट, रेलवे, प्रोसिक्यूशन इत्यादि को अपनाया और उससे तमिल भाषा काफी समृद्ध हुई।

समाचारों की भूखी तमिल जनता की सतुष्टि के लिए 'स्वदेशमित्रन' का ठीक समय पर प्रकाशन शुरू हुआ। देश उत्तेजना की अवधि से गुजर रहा था। वाइसराय लार्ड रिपन को बड़ा आशा ए थी। स्वायत्त-सरकार की उनकी योजना ने जनता के उत्साह को बढाया। तब भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस थी, जिसने जनता के कष्टों को खुले रूप मे जाँच करना और उन पर विचार विमर्श करना शुरू कर दिया था, अत देश मे सर्वत्र जागृति की भावना व्याप्त थी। तमिलनाडु मे हरेक 'हिन्दू' पत्र को नहीं पढ सकता था। और देश-विदेश के समाचारो से अवगत नहीं हो सकता था। ऐसे वर्ग के पाठको की जरूरते पूरा करने के लिए ही इस पत्रिका का श्रीगणेश हुआ। 'हिन्दू' से अवकाश ग्रहण करने के उपरान्त सुब्रह्मण्य अय्यर पूरा ध्यान 'स्वदेशमित्रन्' पर दे सकते थे और उन्होने जल्दी ही इसे दैनिक पत्र के रूप मे परिवर्तित कर दिया। पत्र की रजत जयंती के अवसर पर उन्होने कहा –

"मैने सोचा कि 'स्वदेशमित्रन' को दैनिक समाचारपत्र के रूप मे विकसित करना अच्छी बात है, किन्तु कई लोगो ने कहा कि तमिल मे दैनिक समाचार पत्र निकालना सभव नही है और इस तरह इसका समर्थन करने वाले व्यक्तियो का मिलना कठिन होता था। मैने अपना निश्चय नही छोड़ा और इसे करता ही रहा। इस जोखिम मे मेरा पक्ष-समर्थन करने वाली तमिल जनता थी, जिन्होने बडी सहायता से 'स्वदेशमित्रन' को अपनाया। हाल ही मे सूरत मे हुए कांग्रेस सम्मेलन (1907) मे इस श्रम के बारे में प्राप्त पत्र इस बात के साक्षी है कि हमारी जनता अपने देश मे होने वाली घटनाओ को कितनी सक्रियता से पढती है। यद्यपि हमें खुशी है कि इस पत्र ने इतना अच्छा काम किया है, फिर भी इसका संचालन एक बडा कठिन कार्य है। तमिल पत्रकार को तमिल और अग्रेजी दोनों की जानकारी आवश्यक है।"

अपने 'हिस्टरी आफ इडियन जर्नलिज्म' मे श्री जे० नटराजन बताते है, "स्वदेशमित्रन" के प्रथम 17 वर्ष भारत व बाहरी ससार मे घटित महत्वपूर्ण घटनाओ के लिए अद्भुत रहे।" उन्होने आगे कहा, "जनता की जिज्ञासा बढी और वह ससार की घटनाओ के बारे मे अधिक-से-अधिक जानने को उत्सुक हुई, 'स्वदेशमित्रन' ने इस बढती जा रही

इच्छा की संतुष्टि के लिए ईमानदारी से प्रयास किये। 'स्थानीय स्वशासन' की लॉर्ड रिपन की योजना ने सार्वजनिक मामलो मे रुचि उत्पन्न की। 1885 मे जनता के दुखो के निमित्त आवाज उठाने के लिए भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की शुरूआत हुई...। जनता बड़ी उत्सुकता से पिछली शताब्दी के अंतिम वर्षों में भारत में सर्वत्र व्याप्त राजनैतिक असंतोष, बाल गंगाधर तिलक का कारावास, बोअर युद्ध इत्यादि के बारे मे, साथ ही संसार की घटनाओं और संसार की हालातो और देश के मामलो के हालातो को जानने की बढ़ती हुई भावना, राजनैतिक जानकारी और राष्ट्रीय चेतना के जागरण के सभी समाचारों को पढती थी।

1889 मे इसके दैनिक बन जाने के साथ 'स्वदेशमित्रन' ने दूसरे चरण में प्रवेश किया। 1904 के रूस जापान युद्ध मे जापान के हाथो रूस की हार ने यूरोपीयो की अजेयता की कहानी को प्रज्वलित किया। युद्ध की स्थिति ने पाठको के लिए उत्तेजनापूर्ण स्थिति पैदा कर दी। पत्र ने आधुनिक शक्ति के रूप मे जापान के उदय और सवृद्धि के बारे मे विवरण प्रकाशित किये।

बंगाल विभाजन के उपरात स्वदेशी आंदोलन प्रारम्भ हुआ। तूतीकोरिन स्वदेशी स्टीम नेविगेशन कम्पनी एक राष्ट्रीय उद्यम शुरू हुआ। इस पर दक्षिण भारत की जनता की स्वदेश प्रेम की भावना केन्द्रित थी। तिन्नवेली जंक्शन में कलक्टर की हत्या, सुब्रह्मण्यम शिवा और वी०ओ० सी० पिल्लई जैसे प्रमुख राजनैतिक कार्यकर्ताओ को सजा, सम्पादक के विरुद्ध राजद्रोह का मुकदमा, 1912 का बाल्कन युद्ध और प्रथम विश्वयुद्ध का छिड़ना कुछ प्रमुख घटनाएं थी, जिन्हें पत्र ने आवश्यक पृष्ठभूमि की सूचना सहित विस्तृत रूप मे प्रकाशित किया।

श्री नटराजन ने लिखा है, "सुब्रह्मण्यम अय्यर ने जनता की इच्छा को संतुष्ट करने के भरसक प्रयत्न किये और उनकी सद्भावना व समर्थन प्राप्त किया। 'पत्र' के परिचालन और प्रभाव के विस्तार के साथ ग्राहक बढ गये और 'स्वदेशमित्रन्' तमिलनाडु मे एक सुव्यवस्थित सुसंचालित तमिल समाचार पत्र के रूप मे दृढतापूर्वक स्थापित हो गया।

सुब्रह्मण्यम अय्यर के सामने यह कोई सरल काम नही था। सर्वप्रथम उन्होने पाठकों को आकर्षित किया, तब उन्हे अपनाया, शिक्षित किया। अक्तूबर 1932 में 'स्वदेशमित्रन्' के स्वर्ण-जयंती समारोह मे बोलते हुए ए० रंगास्वामी आयंगर ने, जिन्होने पत्र का सम्पादन अपने हाथ मे लिया था, कहा कि जिन शारीरिक कष्टो, कठिनाइयो और खतरो का सामना उनके पूर्वाधिकारियों ने किया, सामान्य आदमी को वे निरुत्साहित कर देते। उन्होंने आगे कहा—

"दक्षिण भारत मे मातृभाषा की पत्रिका के प्रथम या रचनात्मक चरणों में श्री सुब्रह्मण्यम अय्यर ने 'स्वदेशमित्रन्' के माध्यम से महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

"साधारण जनता में उस समय न तो भाषा का शब्दभडार ही था, न यथेष्ट शिक्षा, संस्कृति का ज्ञान ही और न ऐसा चरित्र ही जिसका वे अनुसरण कर सकते या अग्रेजी समाचार पत्रो, चाहे वे अग्रेजों के हो या भारतीयो के, का अनुकरण कर पाते। उन्हे पाठको के स्तर के अनुसार उनकी निजी भाषा में इस तरह लिखना पडता था कि वे इसे समझ सकें, समाचारो, सूचना व जानकारी मे रुचि ले सके और उन टिप्पणियों और आलोचनाओ मे रुचि ले सकें, जिन्हें शिक्षाप्रद प्रक्रिया हेतु लिखना पड़ता था। मुझे वे दिन याद है, जब मै श्री सुब्रह्मण्यम अय्यर से उनके सम्पादकीय कमरे में मिलने जाया करता था जहां वे अपने तमिल पाठकों के लिए यूरोपीय महाशक्तियो की विदेशनीति मे हो रहे नये परिवर्तनो की सूचना को रूप देने मे या निकटपूर्व, मध्यपूर्व या सुदूरपूर्व मे उठ रही उन अनेक आवाजों से संबंधित घटनाओ और तथ्यों को प्रदर्शित करने हेतु जूझते रहते थे जिनके द्वारा आगे अन्तर्राष्ट्रीय उलझने पैदा हुईं। मुझे यह भी याद है कि उनकी हार्दिक अभिलाषा इन सब को शुद्धतावादियो तथा पंडितों की सुपरिचित क्लिष्ट, पक्षपातपूर्ण भाषा में प्रस्तुत करना न होकर ऐसी भाषा मे व्यक्त करना था, जिसे मातृभाषा के विद्वान ही नहीं, साधारण व्यक्ति भी समझ सके और उसका अनुसरण कर सके। धैर्यशील व सुदृढ प्रयास से 'स्वदेशमित्रन' पडितों के समर्थन सहयोग को भी पाने मे सफल हुआ।

"इस प्रयोजन हेतु सुब्रह्मण्यम अय्यर ने उलझनभरे आधुनिक विचारों को व्यक्त करने के निमित्त नये वाक्यांश गढ़े, किन्तु उन्होंने अंग्रेजी के रेलवे पुलिस इत्यादि शब्द जिन्हें पाठक बिना कठिनाई के समझ सकते थे, स्वतन्त्रतापूर्वक लेने में संकोच नहीं किया। इन धारणाओं को व्यक्त करने हेतु उन्होंने, जैसा कि ऐसे ही प्रसंग में, जवाहरलाल नेहरू ने कहा था, 'विकटताएं' पैदा नहीं की, उन्होंने उस समय अन्य भाषाओं में प्रचलित शब्दों और वाक्यांशों को भी ग्रहण किया। तमिल के प्रति उनका प्रेम किसी अन्य से कम न था। उन्होंने 'स्वदेशमित्रन' को पूर्णतः तमिल जनता की भलाई के लिए ही शुरू किया था। जनसभाओं में वह नेताओं को मातृभाषा में बोलने के लिए कहते थे। उन्होंने विभिन्न विषयों पर तमिल में पैम्फलेट निकाले, जिन पर कांग्रेस सम्मेलनों में और अन्यत्र विचार-विमर्श किया गया था। उन्होंने जिस बात पर जोर दिया, वह था, हमें तमिल बोलचाल व लेखन दोनों में स्पष्ट और सरल शैली को विकसित करना चाहिए। तमिलनाडु में जनरुचि पैदा करने और दिव्य लोकमत बनाने का अत्यधिक श्रेय उनको ही जाता है।"

महत्वपूर्ण दशक और उसके बाद

मार्च, 1897 में सुब्रह्मण्यम अय्यर प्रशासनिक खर्च पर वेलबाई कमीशन के समक्ष गवाही देने इंग्लैंड गये। इससे 'हिन्दू' के वित्तीय स्रोतों पर दबाव पड़ा। वह उसी वर्ष अगस्त में लौट आये और बड़ी योग्यता और उत्साह से उन्होंने पत्र का सचालन जारी रखा "इग्लैंड से लौटने के उपरांत उनके लेखों की बड़ी प्रशंसा की गई और बम्बई राज्य के ट्रायलों ने उनकी सुदृढ शक्ति और महान साहस पर मोहर लगा दी। पत्र के वित्तीय साधन नहीं बढ़े और उनके बड़े मित्र, महाराजा विजयानगरम अचानक मई में चल बसे थे।

'हिन्दू' के 21 सितंबर, 1903 को जारी रजत-जयती परिशिष्ट में छपे एक लेख में वी० राघवचारियर ने लिखा था कि सुब्रह्मण्यम अय्यर 'हिन्दू' पर ऋणों के भारी बोझ के कारण निराश हो गये और उन्होंने साझेदारी को भंग करना चाहा। उन्होंने आगे कहा, "यह प्रस्ताव मुझ पर वज्रपात की तरह आया—हमने शताब्दी की एक चौथाई अवधि से भी अधिक समय तक कंधे-से-कंधा मिलाकर काम किया था, इसलिए अत्यत दुःख और पीड़ा के साथ मैंने प्रस्ताव प्राप्त किया, फिर भी होनहार के सामने मुझे घुटने टेकने पड़े।"

दो व्यक्तियों, जिन्होंने 'हिन्दू' का संवर्धन किया था, के बीच साझेदारी सितम्बर, 1898 में टूट गई। 3 अक्तूबर को सुब्रह्मण्यम अय्यर और वी० राघवचारियर द्वारा हस्ताक्षरित एक सूचना 3, अक्तूबर के 'हिन्दू' में प्रकाशित हुई, जिसमें कहा गया था :—

"इससे सबधित सभी को एतद् द्वारा अधिसूचित किया जाता है कि जी० सुब्रह्मण्यम अय्यर और एम० वी० राघवचारियर के बीच 'हिन्दू' समाचार पत्र और इसके प्रेस, संयत्र, भवनों, इत्यादि के स्वामित्व की जिस साझेदारी का निर्वाह किया गया था, पारस्परिक समझौते द्वारा, सितम्बर, 1898 के 14वें दिन भग कर दिया गया है और यह कि उक्त एम०

वी० राघवचारियर 'हिन्दू' समाचार पत्र और प्रेस इत्यादि के एकमात्र स्वामी हो गये हैं। जी० सुब्रह्मण्यम अय्यर का 'हिन्दू' के साथ स्वामित्व सम्बन्ध समाप्त हो गया है। फलस्वरूप 'हिन्दू' समाचार पत्र, भवनों, और इसके प्रेस इत्यादि से सबधित उक्त साझेदारी की सम्पत्ति जो पहले विद्यमान है और इसके उपरात उपार्जित हो सकती है, में कोई रुचि नहीं है और उक्त जी० सुब्रह्मण्यम अय्यर सितम्बर, 1898 के 14वे दिन या उक्त तिथि से साझेदारी के जमाकर्ताओ द्वारा निर्वाहित किन्ही दायित्वों के प्रति उत्तरदायी नही होगा।"

सुब्रह्मण्यम अय्यर ने भी इस विदाई को अवश्य गंभीरतापूर्वक महसूस किया होगा, किन्तु यह देखकर उन्हे अवश्य खुशी हुई होगी कि 'हिन्दू' का सम्पादन उन्ही के द्वारा कई वर्षों तक प्रशिक्षित सी० करूणाकर मेनन को सौंपा जा रहा था। कुछ समय तक उनकी और उनके साझेदार की कई प्रश्नों पर आंखें चार नहीं हुई, क्योंकि वह समझौता करने के इच्छुक नही थे, विशेषत: समाज सुधार के क्षेत्र मे। उनके मतभेद दु:खद रूप मे जनता के सामने आये। सुब्रह्मण्यम अय्यर ने इसी बीच 'मद्रास-स्टैंडर्ड' (अंग्रेजी दैनिक) साथ ही 'यूनाइटेड इंडिया' (उनके द्वारा शुरू किया गया अंग्रेजी साप्ताहिक) का सम्पादन कार्य सम्भाला। उन्होंने तमिल दैनिक 'स्वदेशमित्रन' जिसे उन्होंने कुछ वर्षों मे इतनी अच्छी तरह से विकसित किया था, का सम्पादन भी जारी रखा। यहां वह अवश्य ही असाधारण शक्ति सम्पन्न व्यक्ति दृष्टिगोचर होते थे। वी० राघवचारियर 'हिन्दू' के संचालन के अतिरिक्त तमिल साप्ताहिक 'हिन्दू नेसान' का सम्पादन भी करते थे। और सुब्रह्मण्यम अय्यर ने अपने नये पदों पर से 'हिन्दू' मे प्रकाशित कुछ लेखों और शैली की आलोचना करनी शुरू कर दी, वी० राघवचारियर ने उसका ऐसे निजी लहजे मे उत्तर दिया, मानो वह अपने पुराने साझेदार को मानहानि का मुकदमा दायर करने को भड़का रहे हो। सौभाग्य से सद्भावना उत्पन्न हुई। इसका श्रेय एस० कस्तूरी रंगा आयंगर को मिलना चाहिए, जिन्हे बाद मे 'हिन्दू' का सम्पादन अपने हाथ में लेना था और जो अब वी० राघवचारियर के कानूनी सलाहकार थे। उनकी सलाह पर वी० राघवचारियर ने एक बयान दिया, जिसमे कहा था कि उनका विचार सुब्रह्मण्यम अय्यर के प्रति अनादरसूचक

शब्द कहने का नहीं है, अनौपचारिक खेद व्यक्त करते हुए उन्होंने 'हिन्दू नेशन' में उनसे 'क्षमा याचना' प्रकाशित की। कानूनी लड़ाई जनता की आंखों से ओझल हो गई।

हर्ष की बात है कि दोनों में से किसी के भी मन में अधिक देर तक कड़वाहट नहीं रही। सितम्बर 21, 1903 में 'हिन्दू' के रजतजयंती समारोह के सर्वाधिक सम्मानित आमंत्रितों में इसके प्रथम सम्पादक थे और सुब्रह्मण्यम अय्यर ने बड़ी शिष्टतापूर्वक भाषण देने का आमंत्रण स्वीकार कर लिया। उन्होंने खेद प्रकट किया, "अब वह दक्षिण भारत में स्वदेशी समुदाय के प्रधान अंग के संचालन के गौरवशाली पद पर नहीं हैं।" किन्तु वह प्रसन्न थे कि 25 वर्ष पहले जो छोटा-सा बीज बोया था,' अब फैल गया है और इतने अच्छे अनुपात में बढ़ गया है। वी० राघवचारियर ने एक काफी अच्छा और उदार उत्तर दिया। उन्होंने कहा, "मेरे मित्र श्री जी० सुब्रह्मण्यम अय्यर ने खेद व्यक्त किया कि आज वह पत्र से संबंधित नहीं है, किन्तु मैं उनसे तथा सभी उपस्थित जनों से कह सकता हूं कि उनका दिल और उनकी आत्मा आज भी मेरे साथ है, जब हम उस शिशु का पच्चीसवां वर्ष समारोह मना रहे हैं, जिसे हमने अब तक पालपोष कर बड़ा किया है।"

बम्बई के प्रसिद्ध न्यायविद् व सुधारक महादेव गोविन्द रानडे उन अनेक लोगों में थे, जिन्होंने साझेदारी के टूट जाने पर खेद व्यक्त किया था। उनकी प्रतिक्रिया समझ में आने योग्य थी, क्योंकि सुब्रह्मण्यम अय्यर के अधीन 'हिन्दू' समाज सुधार आंदोलन में अग्रणी था।

1893 से 1902 के बीच का दशक सुब्रह्मण्यम अय्यर के जीवन में अत्यंत घटना बहुल रहा। 1893 में वह मद्रास नगरपालिका परिषद् (उच्च निगम) के लिए चुने गये और कौंसिलर के रूप में नौ वर्ष तक अपने साथी नागरिकों की सेवा करते रहे। 1896 और 1899 में उनका दुबारा चुन लिया जाना यह सिद्ध करता है कि उन्होंने अपने चुनाव क्षेत्र की जनता की भावना और प्यार को जीत लिया था। वह आदर्श कौंसिलर थे, जिन्होंने जनता को नागरिक सुविधाएं दिलाने के अथक प्रयास किये। कहा जाता है कि अगस्त 1896 में पी० त्यागराज चैट्टियर ने मजाक के

इस मे शिकायत की कि सुब्रह्मण्यम के क्षेत्र (त्रिप्लिकेन) के स्वच्छता सुधार की परियोजनाओं पर अन्य क्षेत्रों की अपेक्षा अधिक धन व्यय किया गया।

चुन लिए जाने के पश्चात् सुब्रह्मण्यम अय्यर ने सर्वप्रथम यह काम किया कि उन्होंने 'हिन्द' में एक अपील निकाली, "जिसमें जनता से यह सहयोग करने का अनुरोध किया गया कि नगर निगम या कार्यपालिका अधिकारियों द्वारा किसी विषय पर जो कार्यवाही की जानी है, उसकी शिकायत स्वयं आकर या पत्र द्वारा मेरे पास भेजने की कृपा करें।"

अपने नगर पालिका मंडल में उन्होंने रात्रिपाठशाला के अतिरिक्त एक विद्यालय स्थापित किया। इन विद्यालयों को चलाने पर उन्हें अपनी जेब से धन खर्च करना पड़ता था। इन संस्थाओं के पर्यवेक्षण में प्रतिदिन दो घंटे वह बिताते थे।

इस तथ्य के होने पर भी कि त्रिप्लिकेन लिटरेरी सोसाइटी, जिसके वह प्रसिद्ध कार्यकर्ता रह चुके थे, ने चुनाव में सक्रियतापूर्वक विरोध में प्रचार किया और इनके विरुद्ध अपने दो उम्मीदवार खड़े किये, जिनमें से एक थे-- अंग्रेज बैरिस्ट जान एडम। वह 1896 में दुबारा चुन लिये गये। एक बैठक जिसमें दोनों ने भाषण दिये, अंग्रेज उम्मीदवार मतदाताओं को दोष देते प्रतीत होते थे, जिससे उन्हें लगा कि वह सुब्रह्मण्यम अय्यर के प्रति संरक्षक होने जैसा व्यवहार कर रहे हैं। यह पुरानी मद्रास नगर पालिका परिषद् के लिए लड़े जाने वाले चुनावों के इतिहास में सबसे अधिक तीव्र संघर्ष था। छः उम्मीदवार मैदान में थे और सुब्रह्मण्यम अय्यर अपने निकटतम प्रतिद्वंदी, जिसने 262 मत प्राप्त किये थे, को 23 मतों से हराकर चुनाव में पुनः विजयी होकर आये।

उनके दुबारा चुन लिए जाने का 'हिन्दू' के समकालीन 'मद्रास टाइम्स', जो किसी भी रूप में उनका मित्र नहीं था, ने स्वागत किया। 'मेल' ने परिणाम पर प्रसन्नता व्यक्त की, "उन्होंने केवल दर भुगतान करने वालों के हितों के लिए घोर परिश्रम नहीं किया, बल्कि वह नगर पालिका के मामलों में सामान्यतः वास्तविक रुचि लेते थे और परिषद् के वाद-विवाद में उनका हस्तक्षेप हमेशा धैर्यपूर्वक सुना जाता था।

दूसरा नगरपालिका चुनाव, जिसने सरसरी रूप से नहीं अधिक ध्यान आकर्षित किया, 1898 मे हुआ, जिसमे एक धनी युवा व्यक्ति लॉड गोविन्दोस को अर्डली नार्टन के विरुद्ध खड़ा किया गया। सुब्रह्मण्यम अय्यर ने गोविन्दोस की उम्मीदवारी का समर्थन किया, क्योंकि वह चाहते थे कि धनी लोग स्वयं नागरिक मामलो मे रुचि ले। नार्टन जो बहुधा 'हिन्दू' को अपना योगदान देते रहते थे, को सम्पादक से समर्थन न मिलने का पूरा विश्वास था और समर्थन न मिलते देख, उन्होंने अपनी निराशा छिपाई और सोचा कि इसमे व्यक्तिगत द्वेषभाव ही सुब्रह्मण्यम अय्यर पर प्रभाव डाल रहा है। सुब्रह्मण्यम अय्यर ने 'हिन्दू' में एक लेख लिखा, जिसमें उन्होंने अपनी स्थिति स्पष्ट की। उन्होंने कहा कि नार्टन के लिए नगरपालिका के कौंसिलर का पद एक बहुत छोटा उपहार है, जिस पर वह पहले ही काम कर चुके है। उन्होंने याद दिलाई कि 'पत्र' ने वाइसराय की कौंसिल के चुनाव के समय नार्टन का समर्थन किया था। नार्टन द्वारा लिखे प्रसिद्ध लेख के प्रत्युत्तर मे सम्पादक ने कहा कि गोविन्दोस का समर्थन करने मे उनका अभिप्राय नार्टन के प्रति विद्वेष की भावना न थी।

'हिन्दू' छोड़ने के कुछ महीनों बाद सुब्रह्मण्यम अय्यर मानहानि के एक मामले मे प्रतिवादी बने। मैसूर सरकार के एक सेवानिवृत कर्मचारी ने अपने वरिष्ठ अधिकारियों को अपनी जन्मतिथि, जिसकी गलत प्रविष्टि की गई थी, ठीक करवाने की प्रार्थना की। इस बारे मे 'हिन्दू' मे छपी सूचना ने उसे बदनाम किया और उसने इसलिए वीरराघवचारियर और पत्र के पहले सम्पादक के विरुद्ध हानि-वसूली का मुकदमा कर दिया। उच्च न्यायालय (मि० जस्टिस शेप्पर्ड) ने दिसम्बर 1, 1899 को हानियो के लिए 5,000 रुपये का अधिनिर्णय किया। मामला यही समाप्त हो गया, क्योंकि यह सिविल मुकदमा था। 'अमृत बाजार पत्रिका' और अन्य पत्रों ने हानि भुगतान करने के संबंध मे 'हिन्दू' के प्रति अपनी सहानुभूति प्रकट की, किन्तु उन्होंने भी यह माना कि प्रतिवादी प्रतिशोधक न था और उसने अनुचित दावा नहीं किया था।

सुब्रह्मण्यम अय्यर ने अपने अवकाश का समय साहित्यिक गतिविधियो मे लगाया और जैसे पहले कहा जा चुका है, उन्होने 'मद्रास स्टैंडर्ड'

और 'यूनाइटेड इंडिया' नामक दो पत्रों के लिए कार्य किया। दूसरे पत्र ने भारतीय आर्थिक प्रश्नों पर नाम कमाया। इस अवधि के दौरान 'स्वदेश-मित्रन्' भी दैनिक समाचार पत्र बना दिया गया था।

1898 में मद्रास में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के 14वें सत्र का स्वागत समारोह आयोजित किया गया। सुब्रह्मण्यम अय्यर ने आवश्यक प्रबंध करने में सक्रिय भाग लिया, क्योंकि वह स्वागत समिति के अवैतनिक सचिवों में से एक थे। इस सम्मेलन की विशेषता यह थी कि उन्होंने सम्मेलन की पूरी कार्यवाही पर एक लघु पुस्तिका तमिल में प्रकाशित की, जिससे अंग्रेजी न जाननेवाले व्यक्ति प्रस्तावों को समझ सके। अगले कुछ वर्षों में उन्होंने कुछ अन्य गण्यमान नागरिकों के साथ मिलकर पुरानी द्रविड रचनाओं के प्रकाशन द्वारा दक्षिण भारत की भाषाओं को समृद्ध बनाने उनमें विज्ञान व प्रौद्योगिकी की पुस्तकों का अनुवाद करवाने और उनके, लेखकों को प्रोत्साहन देने हेतु उन्हें पुरस्कार प्रदान करने के उद्देश्य से 'द्रविड भाषा संगम' की स्थापना की।

1899 का वर्ष उनके घरेलू जीवन में घटित दुःखदायी घटना से समाप्त हुआ। इनकी पुत्री सिवप्रिया अपनी 22 वर्ष की अल्पायु में ही चल बसी। यहां इसका उल्लेख किया जा सकता है कि वह अपनी माँ की मृत्यु के उपरांत पिता के घर का सारा काम संभाले रही।

1902 में जी० सुब्रह्मण्यम लार्ड कर्जन के निमंत्रण पर दिल्ली दरबार में सम्मिलित होने दिल्ली आये। शताब्दी के चौथाई भाग तक जनता की सेवा करने के उपरात उन्हें यह सरकारी मान्यता मिली और इसी प्रकार का निमत्रण कस्तूरी रंगा आयगर को 1911 में दिल्ली दरबार में उपस्थित होने का मिला।

सुब्रह्मण्यम अय्यर ने काकीनाडा, (नव कोकानाडा) जो जब आंध्र प्रदेश में है, उहोंने उसी वर्ष जून महीने में हुए प्रांतीय सम्मेलन की अध्यक्षता की। यह जानना अच्छा है कि 'हिन्दू' ने अपने पहले सम्पादक का सम्मेलन के अध्यक्ष बनने पर स्वागत किया। यह बताते हुए कि उन्होंने शताब्दी के चौथाई तक जनता की सेवा सच्ची लगन से की, पत्र ने सुब्रह्मण्यम अय्यर की इस बात का समर्थन किया कि उन्होंने अपने अध्यक्षीय भाषण

मे राज्य सचिव के इस दावे की पोल खोल दी कि भारत में कोई गरीबी नहीं है।

अपने अध्यक्षीय भाषण में सुब्रह्मण्यम अय्यर ने भारतीय जनता पर एक के बाद दूसरे कर लगाए जाने और वाक्‌चातुर्य से भरे उन सरकारी बयानों, जिनमें कहा गया था कि एशिया में ही नहीं, विश्व-भर में भारत सबसे कम कर देनेवाला देश है, का तीव्र खडन किया। उनके भाषण की प्रतिच्छाया 'यूनाइटेड इंडिया' और अपनी पुस्तक 'भारत मे ब्रिटिश शासन के कुछ आर्थिक पहलू' मे व्यक्त विचारों पर पड़ी दिखाई देती है। सुब्रह्मण्यम अय्यर ने ब्रिटिश शासन के प्रतिनिधियों द्वारा "दुर्गम पर्वतीय स्थलो पर विलासप्रद जीवन बिताने और उनकी इस धारणा कि भारत की दशा के बारे में वे जानने योग्य हर बात जानते हैं," की ओर भी इशारा किया। उन्होने आगे कहा, "जहां, तक हमारे शासको की यह भावना है, आलोचना करने का अधिक अवसर नही है, यहां तक कि सर्वोच्च महत्व और अधिकार सम्पन्न व्यक्तियों से भी ऐसी आशा नहीं कर सकते। इसका अमलाशाही पर प्रभाव पड रहा है और उनका आनन्दप्रद आत्मविश्वास हिलने लगा है। अत हम सब पर एक सतत् आन्दोलन करने . . हानिप्रद तथ्यों को अपने शासकों के सामने रखने और उनके तर्कों की असत्यता सिद्ध करने के लिए जिम्मेदारी आ पडी है। हमारे लिए अपने गरीब वर्गों के करोडो व्यक्तियों से अधिक प्रिय कुछ नहीं है, जो सामान्य समय में आधे भूखे रहते हैं और अकाल के समय "मक्खियों की भाँति मर जाते है। हमारे लिए, जो जाति के राजनीतिक भावना का प्रतिनिधित्व करते हैं, इससे अधिक महत्व या मूल्यवान कोई अन्य उद्देश्य नहीं है कि हम अपनी सर्वोच्च शक्तियों और संसाधनों को उनकी सेवा में न्योछावर कर दें।"

1907 में सुब्रह्मण्यम अय्यर ने उत्तरी अरकाट जिला सम्मेलन क भी सभापतित्व किया और लोगों से अपील की कि वे स्वदेशी उद्योगों को बढ़ाएं और विदेशी वस्तुओं, कम-से-कम उन वस्तुओं जिन के स्थान पर स्वदेशी वस्तुएं विद्यमान हैं—का बहिष्कार करें। उन्होंने इस बात को स्पष्ट करने की ओर ध्यान दिया कि

स्वदेशी ही वास्तविक आंदोलन है और बहिष्कार ही देश के हितों को समृद्ध करने का उपयोगी और समुचित हथियार है।

तंजावूर जिला सम्मेलन के सभापति के रूप मे बाद मे दिया गया उनका भाषण सीधे तौर पर अधिक राजनीतिक था। बंगाल की घटनाए निरंतर सरकारी दमनकारी आदेश, उत्तेजित क्रांतिकारियों द्वारा बम का प्रयोग करना एक स्पष्ट नेतृत्व को आमंत्रित कर रहा था। विशेषत: भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस स्वयं नरम और गरम विचारो के बीच मतभेद के कारण कमजोर हो, नेतृत्व प्रदान करने मे असफल रही। सुब्रह्मण्यम अय्यर ने कहा, "हम मे से कोई ऐसा नहीं जिसके मन मे हिंसा की अवज्ञा की भावना न पैदा होती हो, जिसके लिए बंगाल के युवक दोषी है—इस क्षण हम यह विश्वास नही करते है कि भारत की मुक्ति ऐसी अमानवीय, मूर्खतापूर्ण दिशा अपनाने से होगी, क्योंकि यह भारतीय जनता की भावना व प्रकृति के विरुद्ध है, भारत में ऐसी पद्धति अपनाने की आवश्यकता नहीं है।"

उन्होंने आशा व्यक्त की कि ब्रिटिश राजनीतिज्ञ स्वयं ही यह विश्वास करने लगेगे कि भारत मे निरंतर अच्छी सरकार का आकस्मिक स्वशासन अंत में उनके देश के लिए वर्तमान दमन नीति अपनाने की अपेक्षा अधिक लाभदायक सिद्ध होगा, यदि वे ऐसा ही करते है। सुब्रह्मण्यम अय्यर ने कहा, "भारत की जनता के पास दूसरा उपाय खुला है, वह है—शांतिपूर्वक अवज्ञा, जो हिंसा और अमानवीयता के सभी कार्यों से मुक्त है और जिसे हमारे साथी देशवासियों ने दक्षिण अफ्रीका और अन्य देशों की निकम्मी सरकारों के विरुद्ध उपाय के रूप में सफलतापूर्वक अपनाया।" 'एंग्लोइंडियन' प्रेस की चर्चा करते हुए, "उनके प्रयास शासकों के मन में क्रोध की भावना भड़काने और आगे स्वतंत्रताओं मे कटौती करवाने, जो अब हमारे सम्मुख प्रमाणित हो चुकी है।" उन्होंने आशा व्यक्त की, "लार्ड मिन्टो अनुत्तरदायी प्रेस के जंगलीपन के अपेक्षा लार्ड कैनिंग के स्मरणीय आचरणों से अच्छी सरकार का पाठ सीखेंगे। यह वही आदमी था, जिस पर मद्रास सरकार ने राजद्रोह का आरोप लगाया।"

देशभक्ति का इनाम

मद्रास सरकार ने 1908 मे 'स्वदेशमित्रन' के सम्पादक, जिन्होंने अब पत्रकारिता में रुचि लेनी छोड़ दी थी, के विरुद्ध राजद्रोह का अभियोग चलाना प्रारम्भ किया। कुछ समय तक यह समझा जाता था कि सुब्रह्मण्यम अय्यर नरमपंथी राजनीति से संतुष्ट न थे। फिर भी उन्हे तिलक की तरह उग्रवादी भी नही कह सकते, किन्तु उसी तरह उन्हे पूरी तरह गोखले जैसा भी नही कहा जा सकता। 'हिन्दू' मे कार्यकाल के दिनो से ही उनमें स्पष्ट अन्तर आ गया था, पर वह इस बारे मे सचेत न थे। 1908 के शुरू मे 'स्वदेशमित्रन' की रजत जयंती समारोह मे बोलते हुए, "उन्होंने इस बात से इन्कार भी किया था। शायद यह परिवर्तन समय चेतना का विशेष गुण रहा होगा, जैसे 22 अगस्त 1908 'हिन्दू' के सम्पादकीय में अभियोग विषय पर लिखते हुए इशारा किया था। 1885 मे काग्रेस के प्रथम सत्र मे पहला प्रस्ताव रखते समय सुब्रह्मण्यम अय्यर ने पूर्वानुमान कर लिया था। ब्रिटिश सम्बन्ध के फलस्वरूप प्राप्त लाभों का उल्लेख करते हुए, उन्होंने कहा था कि भारत के इतिहास मे प्रथम बार उन्होने उनमे राष्ट्रीय एकता का अनुपम रूप देखा। राष्ट्रीय अस्तित्व का बोध तथा अच्छा बनने की सामूहिक उत्कट अभिलाषा और सर्व सामान्य रूप में देश का सम्मान।" उन्होने आगे कहा, "आज से आगे, हम इससे पहले से अधिक औचित्य से भारत राष्ट्र, राष्ट्रीय सम्मति और राष्ट्रीय अभिलाषा की बात कर सकते है।" 'हिन्दू' ने तब सुब्रह्मण्यम अय्यर द्वारा राष्ट्रहित के लिए की गई, उनकी विभिन्न सेवाओ की चर्चा की और कहा कि उन पर राजद्रोह का आरोप नहीं लगाया जा सकता। सूरत मे हुए काग्रेस के अंतिम सत्र मे पत्र को व्यंग्यपूर्वक याद दिलाई कि उन्होंने अपना भाग्य समझौतावादियो को सौंप दिया है और अपना समर्थन जाति, धर्म और पी एम मेहता और गोखले द्वारा बनाये गये संविधान को दे दिया है, पर तिलक द्वारा समर्थित लोगो को नहीं।

'हिन्दू' ने, सरकार को चेतावनी दी कि राजद्रोह के आरोपो से वस्तुतः देश मे शांति भग होगी और किसी भी घटना की स्थिति म

मद्रास सरकार को "बंगाल, बम्बई और संयुक्त प्रांत में किये जा रहे सुविदित कार्यों और दोषी सम्पादक को दी गई चेतावनी" को ध्यान मे रखना चाहिए। यह कार्यपद्धति सुब्रह्मण्यम अय्यर के संबंध में नहीं अपनाई गई थी, "यद्यपि अपने राजनैतिक रिकार्ड के द्वारा वह सरकार के पक्ष में सभी संभव व संतोषजनक कार्य करने और सहिष्णुता का परिचय देने के पूर्णत पात्र हैं। जन सेवक के रूप में अपने साथी देशवासियों को हार्दिक प्यार एव श्रद्धा के पात्र है। उनकी आयु और बिगड़ते हुए स्वास्थ्य को देखते हुए उनके प्रति सार्वभौम सहानुभूति होनी चाहिए।"

किन्तु 'देशभक्ति' विदेशी शासकों के लिए हमेशा संदेहास्पद होती है। मद्रास सरकार एक देशभक्त के द्वारा शासकों को कानून व न्याय सम्मत जनकल्याणकारी कार्यों की प्रेरणा देने वाले लेखों और गदर व खूनखराबे को बढ़ावा देने वाले लेखों में अन्तर स्पष्ट न कर सकी। परस्पर विरोधी इन दोनों दृष्टिकोणो को समान समझ लेने के कारण शासकों ने जो अशोभनीय 'राजद्रोह' का अभियोग लगाया, वह उनका अज्ञापन ही था। 'हिन्दू' तथा अन्य पत्रों ने चेतावनी दी, जन सेवको ने आपत्तिया उठाई, किन्तु शासकों ने उन पर कोई ध्यान नहीं दिया।

इस अभियोग ने सारे देश का ध्यान अपनी ओर खींचा, सबने विचार व्यक्त किया कि यह अभियोग ऐसे आदमी पर लगाया गया है, जिसने कभी भी देशवासियों को ब्रिटिश शासकों के विरुद्ध नही भड़काया और न ही विदेशी शासकों के प्रति घृणा को बढ़ावा दिया। मद्रास के सुप्रसिद्ध प्रकाशक जी० ए० नटेसन और लैंड होल्डर्स एसोशियेसन के सेक्रेटरी जी० वेंकटरंगा राव द्वारा दी गई गवाहियों ने भी सिद्ध कर दिया कि सुब्रह्मण्यम अय्यर कानून का पालन करने वाले और ईमानदार प्रकृति के व्यक्ति थे। फिर भी अदालत ने उसे नहीं माना।

उन्हे तीन शिकायतों और 'स्वदेशमित्रन' में प्रकाशित राजद्रोहात्मक नौ लेख लिखने के कारण दोषी ठहराया गया तथा आरोपों की सत्यता सिद्ध करने हेतु उन लेखों को प्रस्तुत किया गया। उस समय वह 55 वर्ष के थे और उनका स्वास्थ्य गिरता जा रहा था। स्वास्थ्य ठीक करने हेतु वह कोटालम प्रपात स्थान पर रहते थे। वहा 21 अगस्त, 1908 में वह

गिरफ्तार किये गये और मद्रास लाये गये। 'स्वदेशमित्रन' प्रेस, कोर्टालम मे उनके अस्थायी निवास और मद्रास मे उनके घर की तलाशी ली गई और कुछ कागज बरामद किये गये। उन्हे मुक्त करने हेतु मद्रास सरकार को समझ आने से पहले, उन्होने तीन सप्ताह मद्रास जेल मे बिताये।

पहली शिकायत तीन लेख, "वन विभाग द्वारा मुसीबते खड़ी करना", "दो दिन मे एक बार खाना" और "अंग्रेजों की अज्ञानता के संदर्भ मे थे।"

पहले लेख सेलम के कुछ किसानो के जंगल कानून में असमानता की शिकायत से सम्बन्धित है। उन्होने उस प्रस्ताव का विरोध किया जिसमे अब तक अनारक्षित वनभूमि, जो कि चरागाह के रूप मे इस्तेमाल की जा रही थी, को आरक्षित करने का विचार किया गया था। उनकी याचिका पर कोई ध्यान नही दिया गया और पत्र ने ब्रिटिश अधिकारियो की तुलना पुराने जमाने के जंगली राजाओं से की, जो एक ओर तो अपनी प्रजा को पुरस्कार देते और फिर उसे डाकुओं से लुटवा देते थे। पत्र ने आगे लिखा, "ब्रिटिश सरकार जनता के जीवन को छोड़कर यथासंभव उनका सर्वस्व निचोड़ लेती है" और जब जीवन भी नहीं रह जाता तो अकाल निधि एवं अकाल पीड़ितों के लिए राहत-कार्य शुरू करती है और जनता से कहती है, "देखो, हम किस प्रकार आधुनिकतम वैज्ञानिक सिद्धांतो के अनुसार अकाल राहत कार्यों का संचालन करते है।"

दूसरा लेख ब्रिटिश संसद के प्रथम मजदूर सदस्य मि० केयर हार्डी के स्काटलैंड के आरब्रोथ स्थान पर दिये गये भाषण के संदर्भ मे लिखा गया। इसमें उन्होंने कहा कि भारत में अनेक गरीब लोगो को दो दिन मे केवल एक वक्त भोजन मिल पाता है। पत्र ने पूछा कि जनता पर व्यर्थ खर्च करने और आय के नये स्रोत खोजने मे असहमत होने की अपेक्षा क्या सरकार का यह कर्त्तव्य नही कि वह सच्चाई को जाने और गरीबी दूर करने के उपाय ढूंढे। यह कोई हैरानी की बात नहीं। पत्र ने टिप्पणी की कि सरकार अपने इसी रूप को सामने ला रही है। उसने जानबूझकर जनता की जीविका के साधन छीन लिये है और क्या अब वह अपने कृत्यो को मानेगी?

तीसरा लेख: "आतंकवादियों द्वारा बंगाल में ब्रिटिश सरकार के लिए बेचैनी के क्षण पैदा करने की घटनाओं पर 'दि स्पेक्टेटर' नामक लंदन की पत्रिका में की गई टिप्पणी के प्रत्युत्तर में लिखा। 'दि स्पेक्टेटर' ने कहा था, "जब ब्रिटिश सरकार का अंत करने हेतु भारतीय खुले संघर्ष के लिए निकल पड़े, तो ब्रिटिश सरकार भी अपनी पूरी शक्ति का प्रयोग कर सकती है, किन्तु ऐसी स्थिति आने तक उसे सहानुभूति एवं न्यायपूर्वक शासन करना चाहिए।" 'स्वदेशमित्रन' ने तत्काल ही टिप्पणी के अंतिम बिन्दु पर अपना अभिमत प्रकट करते हुए लिखा, "जनता की वास्तविक इच्छा न्याय, व्यवहार में समानता, बोलने एवं कार्य करने की स्वतंत्रता" पाना है, केवल दया पाने की नहीं, जो एक कुत्ता भी अपने मालिक से पा लेता है।

दूसरी शिकायत, नरम पंथियों को चाबुक मारना और एंग्लो-इंडियन पत्रों द्वारा विषवमन तथा बुरा मैजिस्ट्रेट कौन है ? लेखों पर आधारित थी।

तिन्नेवल्ली से नरमपंथियों का शिष्टमंडल आया। उसने गवर्नर सर 'आर्थर लेली' की प्रतीक्षा की, ताकि उनसे जिला प्रशासन में गड़बड़ियों से निपटने में प्रशासन की अक्षमता की शिकायत की जा सके। इसी विषय पर उन्होंने पहला लेख लिखा : "लेखक ने गवर्नर के इस मंतव्य पर भी प्रश्नचिन्ह लगाया कि तिन्नेवल्ली तथा तुतीकोरिन के दंगे चिदम्बरम् पिल्लई के भाषणों तथा कानून-व्यवस्था बनाये रखने में प्रशासन को सहायता देने से इनकार करने वाले स्थानीय नेताओं के कारण हुए। पत्र ने शिष्ट-मंडल के विचार को ही हास्यास्पद बताया।" लेख का समापन इन शब्दों से हुआ, "या तो हम हमेशा गुलाम बने रहें या यदि हम स्वतंत्र होना चाहते है, तो हम रिवाल्वर द्वारा या सजा भुगत कर मर-मिटने को तैयार रहें और आततायी पुलिस बल से हिसाब चुकाएं। अरे, अति नरमपंथियो। तुम अब कम-से-कम इतना तो समझ जाओ कि अंग्रेज अधिकारी व पत्र यह चाहते हैं कि वे सभी सज्जन जो खुद को नरमपंथी कहते हैं, अफसरों द्वारा इंगित उग्रवादियों के विरुद्ध हो जा और अपने आप को उनसे बिल्कुल अलग कर ले। यदि नरमपंथी ऐसा नहीं करते, तो उन्हें अपने

अच्छे व्यवहार की गारंटी देनी होगी। फिर भी पुलिस की उन पर नजर रहेगी। यहा तक कि उन्हें जेल भी जाना पड़ सकता है।"

दूसरे लेख मे मद्रास के एक एंग्लो इडियन दैनिक पत्र मे छपी रिपोर्ट का हवाला दिया गया, जिसमे कहा गया था कि अग्रेज शासक की रूस यात्रा का उद्देश्य भारत को जार के हाथो बेचना है। 'स्वदेशमित्रन' ने बताया कि यह भ्रममात्र है ताकि लोगो को रूसी शासन की कल्पना से भयभीत किया जा सके, यदि भारत रूस को बेच भी दिया जाय, तो भी भारत के पास खोने के लि कुछ भी नही है, क्योकि रूस मुख्यत कृषि प्रधान देश है, भारत के खेतों का उत्पादन बाहर नहीं जाएगा जैसा कि अग्रेज उद्योगपतियो द्वारा किया जाता रहा है।

तीसरा लेख, कलकत्ता मे घटी हिंसक घटनाओं पर 'द स्पेक्टेटर' द्वारा इस कथन पर की गई एक टिप्पणी के सदर्भ मे है, "बुरा मैजिस्ट्रेट वह है जो अपने कर्तव्य का इस ढंग से पालन करता है कि उसके परिणामस्वरूप दगे और हत्याएं होती है, उसी तरह एक बुरा मत्री वह होता है जो हमेशा ससद मे दूसरो को प्रश्न पूछने का अवसर प्रदान करता है।" तिन्नेवल्ली के दगो की ओर इंगित करते हुए 'स्वदेशमित्रन' ने कहा, "यह इसलिए हुआ कि तिन्नेवल्ली के मैजिस्ट्रेट बुरे अधिकारी थे। उसने केवल दगे ही नही करवाये, बल्कि गड़बड़ फैलाने के आरोप मे लोगो को गोली मार देने के आदेश भी दिये। किन्तु हमारी उत्तरदायी सरकार उन मैजिस्ट्रेटों को उनकी अक्षमता के लिए दड देने की अपेक्षा उनके आचरण की प्रशसा ही करती है।

अंतिम शिकायत इन तीन आरोपों पर आधारित थी, "दो मून एग्लोइडियन," "क्या तुम्हे अभी तक अक्ल नही आई?" और "कौन अच्छा है—एक भारतीय या एक यूरोपीय कुत्ता?"

प्रथम लेख मे अंग्रेज सरकार के इस दृष्टिकोण की आलोचना की गई, जिसके अनुसार अग्रेजो के लिए भारत मे काम करना खतरे से खाली नहीं है, इसलिए अंग्रेज अधिकारियों को इस खतरे से भरी स्थिति में काम करने के लिए उच्च वेतन दिया जाना चाहिए। लेख में ब्रिटेन क दो सेवानिवृत्त निवासियों—सर रिचर्ड स्ट्रेची और डॉ० पोप के उदाहरण

दिये गये हैं—जो चौथाई सदी तक पेंशन भोगकर मरे। यहा तक कि वे मृत्यु के समय तक नौकरी पर बने रहे। यही नही, उन्होने भारत मे रहने वाले अपने संबंधियो को अच्छी नौकरी पर लगाने के लिए अपने प्रभाव का इस्तेमाल किया। लेख आगे कहता है, "इंग्लैंड या स्कॉटलैंड मे कोई भी ऐसा परिवार नही जो भारत से प्राप्त आय पर निर्भर न हो?" "ऐसी स्थिति मे क्या अंग्रेज स्वेच्छा से इस देश को हमारे हाथो मे छोड जाएंगे? हमारा लक्ष्य है, प्रभुत्वसम्पन्नता एव स्वराज्य का अधिकार प्राप्त करना। क्या वे अपने भाग्य के इस व्यापक स्रोत को आसानी से छोड देंगे? अब हम भारतीय समझ सकते है कि उन्हे स्वतंत्रता प्राप्त करने से पहले कितने कष्ट सहन करने होंगे और यदि वे अपने प्रयासों मे सफल होना चाहते है, तो भीषण कष्ट सहने के लिए तैयार हो जाए।"

दूसरे लेख मे म्योर सेन्ट्रल कालेज के प्रिंसिपल की आलोचना की गई है, जिसने 'भारत मे दुर्भिक्ष' नामक लेख लिखने के आरोप मे एम० ए० कक्षा के एक छात्र को निलंबित कर दिया था। उस लेख में उसने लिखा था कि भारत मे अकाल पड़ने का कारण धन का निरतर विदेश के लिए निकास होना है। प्रिंसिपल इतने से ही सतुष्ट न हुआ। उसने छात्र को कालेज से भी निकाल दिया। छात्र ने क्षमा याचना की और आश्वासन दिया कि वह आपत्तिजनक शब्दो को हटा देगा, किन्तु कोई लाभ न हुआ। "कैसी नीचता और क्रूरता है?" 'स्वदेशमित्रन्' ने पूछा, "क्या एक छात्र, जिससे उसके ज्ञान की परीक्षा हेतु निबंध लिखाया जाता है, उसमें अपने विचारों को स्वतंत्रतापूर्वक वह प्रकट नही कर सकता है? फिरंगियो और सरकार की प्रशंसा के गीत न गाने वाले छात्रो का जब यह भविष्य है, तो फिर हमारे नोजवान ऐसे लोगो के अधीन अध्ययन क्यो करें? . . क्यों न हम सभी फिरंगियों द्वारा शासित कालेजों व अध्यापको का बहिष्कार करें, जैसा कि विदेशी वस्तुओं का करते है। . . यदि जनप्रिय नेता राष्ट्रीय कालेज खोले और हमारे छात्र केवल उसी मे पढने की ठान लें, तो फिरंगी हमारे देश से भागने को विवश हो जाएंगे।"

अंतिम लेख एक ऐसी घटना के सबध मे लिखा गया है, जिसमे रेलवे स्टेशन पर यूरोपीय गार्ड एक भारतीय टिकट बाबू को इसलिए पीट डालता है कि उसने उसके कुत्ते को डराया था। पत्र ने व्यग्य कसते हु

टिप्पणी की कि किसी भारतीय के लिए यह अधिक अच्छा होगा, "वह भारत माता के कोख से जन्म लेने की अपेक्षा गोरांग द्वारा पालित कुतिया से जन्म ले।"

प्रारंभिक जांच-पड़ताल का काम कई सप्ताह चलता रहा। मुख्य प्रेसीडेंसी मैजिस्ट्रेट और उच्च न्यायालय ने सुब्रह्मण्यम अय्यर को जमानत पर छोड़ने से इन्कार कर दिया, जबकि मेजर (तत्पश्चात् कर्नल) सिब्र-लोक, जो भारतीय चिकित्सा सेवा के मुख्य सदस्य थे, ने सुब्रह्मण्यम अय्यर के स्वास्थ की जांच की और कहा कि कारावास का उनके स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा, क्योंकि वह कुष्ट रोग से पीड़ित होने के साथ-साथ 'दिल के रोगी' भी है। इस विचार का समर्थन मद्रास विश्वविद्यालय के चिकित्सक डॉ० एम० कृष्णस्वामी, एम० डी० ने भी किया। दो प्रसिद्ध वकीलों ने मामले पर बहस की—टी० रंगाचारी ने सुब्रह्मण्यम अय्यर के बचाव में और एन० ग्रांट ने सरकार के पक्ष में।

निरन्तर लम्बे समय तक एक महान जननेता, विशेषत. बीमार, पर मुकदमा चलते रहने के कारण जनमत आंदोलित हो रहा था। पायोनियर, जिसके साथ सुब्रह्मण्यम अय्यर ने कई राजनैतिक लड़ाइयां लड़ी थी, ने जनसाधारण की भावनाओं का अवलोकन करने पर लिखा, "यह दु.ख की बात है कि इतने महान व्यक्ति को राजद्रोह जैसे संदेहास्पद अपराध में फंसाया गया है।" आर० एन० एम० अर्थात प्रसिद्ध आर० एन० मधोलकर, ने अमरोती से 'हिन्दू' में लिखा, "जब कानून-व्यवस्था में हानिप्रद दुष्टता के दमन की आवश्यकता पड़ती है, तो उसकी जरूरत न्यायप्रिय व दयालु हृदय वाले लोगों को भी होती है। इस बात का ध्यान रखा जाना चाहिए कि कहीं हम मित्रों को शत्रुओं और शत्रुओं को मित्रों में गिनने की भूल न कर बैठें।"

मद्रास सरकार ने अनुभव किया कि वे जनमत की धारा के विरुद्ध तैरने का प्रयास कर रहे हैं और दलदल से बाहर निकलने का ऐसा मार्ग ढूंढ रहे हैं, जिससे अपनी प्रतिष्ठा बचाई जा सके। उन्होंने अपने वकील नुजेंट ग्रांट को सलाह दी कि वह मामले को आपराधिक दण्डसंहिता की धारा 494 के अंतर्गत निम्नलिखित शर्त-नियमों को पूरा करने के उपरांत

वापस ले लें। नुजेंट ग्रांट ने बताया कि प्रमुख विचार जो सरकार को उचित जान पड़ते हैं, ये हैं — सुब्रह्मण्यम अय्यर की आयु, उनका गिरता हुआ स्वास्थ्य और उनका सरकार को यह वचन देने के लिए तैयार होना कि भविष्य मे ऐसे किसी भी कार्य जन-लेखन व वक्तव्यों से वह अलग रहेंगे, जिनसे वर्ग-विद्वेष की भावना भड़के या राजद्रोह की भावना उत्पन्न होती हो। सुब्रह्मण्यम अय्यर, जिनका स्वास्थ्य निरंतर गिरता जा रहा था, ने अदालत को बताया, "मेरा कभी भी सरकार के विरुद्ध घृणा भड़काने या गैर वफादारी को बढ़ावा देने का उद्देश्य नहीं रहा, जीवन के किसी भी क्षण में मैंने ऐसा नहीं सोचा और न ही भविष्य मे ऐसा करूंगा, इस आश्वासन को अधिक सुनिश्चित बनाने और अच्छे व्यवहार के लिए मैं बधपत्र निष्पादित करने को तैयार हूं। आपसे मेरी केवल यही प्रार्थना है कि इस उत्तेजित स्थिति को संयत करें। साथ ही मैं यह भी कहना चाहता हूं कि अपने जीवन में कभी भी जातीय भावनाओं को उत्तेजित करने का मेरा इरादा नहीं रहा है।" इसके पश्चात मुख्य प्रेसीडेंसी मैजिस्ट्रेट, एफ० डी० बर्ड ने उनसे कहा कि वह अच्छे व्यवहार के लिए 5000 रुपये की जमानत, पच्चीस-पच्चीस सौ रुपये के दो जमानतियों का बधपत्र प्रस्तुत करें। तुलजाराम लाल तथा पी० लक्ष्मीनरासू ने उनकी जमानत दी।

जब मामला वापस ले लिया गया और सुब्रह्मण्यम अय्यर को 5 सितम्बर 1908 को रिहा कर दिया गया, तो यह समाचार चारों और फैल गया और दक्षिण भारत के विभिन्न केन्द्रों में कष्टों से छुटकारा पाने एवं प्रशासन के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करने के उपलक्ष मे सभाओं का आयोजन किया गया। मद्रास महाजन सभा की कार्यकारिणी की बैठक एल० ए० गोविन्दराघव अय्यर के सभापतित्व मे हुई, जिसमें कहा गया, "श्री सुब्रह्मण्यम अय्यर पर चलाये गये मुकदमे को वापस लेने के संबंध मे मद्रास सरकार को एक धन्यवाद प्रस्ताव भेजा जाए।"

'हिन्दू' पत्र के भूतपूर्व सम्पादक पर चलाये गये मुकदमे को वापस लिए जाने का 'हिन्दू' पत्र ने भी स्वागत किया। जनभावनाओं को व्यक्त करते हुए पत्र ने लिखा, "भारत में मुकदमा चलाने की न तो जरूरत है और न चलाया ही जाना चाहिए।" पत्र ने टिप्पणी की, "भारत में प्राय यह नहीं होता कि सरकार अपने द्वारा उठाये गये कदमों को वापस ले

ले या किसी विशिष्ट कार्य को कर लेने के उपरान्त अपने निर्णय में की गई भूल को स्वीकार करें।" किन्तु पत्र ने यह कहने का अवसर भी नहीं खोया, "सरकार यह समझने में असमर्थ रही कि उसके द्वारा चलाये गये इस मुकदमे से लोगों की भावनाओं और सरकार के प्रति उनकी सद्भावना को कितनी चोट पहुंची थी।" पत्र ने उच्च न्यायालय के उस रुख के प्रति भी खेद प्रकट किया, जिसके अनुसार सुब्रह्मण्यम अय्यर को जमानत पर रिहा कर देने से इन्कार कर दिया गया। पत्र ने तर्क किया "स्वास्थ्य की वास्तविक दशा यदि इतनी खराब थी कि सरकार को मुकदमा वापस लेना पड़ा, तो यही उन्हें जमानत पर छोड़ दिये जाने का तर्कसंगत कारण भी था। इससे आज हमारा यह कहने का अभिप्राय नहीं कि सुब्रह्मण्यम अय्यर को जमानत पर न छोड़े जाने के अन्य विचार और आधार न थे—हमारे विचार से रहे होंगे। श्री टी० रंगाचारी द्वारा विद्वान मुख्य न्यायाधीश के सम्मुख प्रस्तुत जमानत पर रिहा करने की याचिका पर गंभीरता एवं प्रभावपूर्ण ढंग से जोर डाले जाने पर भी न्यायाधीश ने उसे ऐसी सरकारी दृष्टि से पढ़ा, मानो किसी को जमानत पर रिहा करना न्यायाधीश की दया पर निर्भर हो, न कि अपराधी द्वारा प्रस्तुत ठोस आधार प्रस्तुत करने पर। जमानत पर रिहा न होने के परिणामस्वरूप जी० सुब्रह्मण्यम अय्यर को दो सप्ताह तक हवालात में रहना पड़ा।

हमने इस तथ्य पर इसलिए इतना ध्यान दिया कि इस विशेष मुकदमे में अभियुक्त को जेल में रखने से उत्पन्न कठिनाई का बहस, का केन्द्र बना हुआ था और जनता के लिए यह आवश्यक है कि जब कभी अवसर आये, देश का सर्वोच्च न्यायालय सरकार की कार्यपालिका की जल्दबाजी एवं कुविचारित कार्यों को रोक सके।

अंतिम समय

अक्तूबर 6, 1908 के 'हिन्दू' मे लिखते हुए जी० सुब्रह्मण्यम ने कहा, "आंखों मे सूजन आ जाने के कारण मैं भारत के हर कोने मे रहने वाले अपने उन मित्रों के पत्रो एव सन्देशो का उत्तर नहीं दे पाया हू, जिन्होने मुझे विगत आपदा से मुक्त होने पर बधाई दी है। मैं उन सभी मे से प्रत्येक को उनके स्तम्भ मे उन पक्तियो के लेखन के माध्यम से धन्यवाद देता हू। इस तरह एक दुखमय गाथा का अत हो गया, जिसने काफी समय तक जनमानस को आदोलित किया, यदि इस नाटक को कटु अंत की ओर बढ़ने दिया जाता, तो मालूम नहीं, जनता की क्या प्रतिक्रिया होती ? सौभाग्यवश सरकार को समय पर समझ आ गई, जो उसने इस कार्यवाही पर नरम रूख अपनाने हेतु जनता की आवाज पर ध्यान दिया।

सुब्रह्मण्यम अय्यर अब आयु की ही नहीं, अपितु शारीरिक रुग्णता के प्रभाव को भी अनुभव करने लगे थे। कोढ़ तीव्रता से चरम सीमा की ओर बढ़ने लगा था। वस्तुत रोग वृद्धि के कारण ही वह सरकार को वचन देने को सहमत हुए थे। इस रोग से पीडित व्यक्ति के लिए कारावास उपयुक्त स्थल न था। फिर भी एक वर्ष तक के लिए जनता के लिए लिखने या बोलने या कोई ऐसा कार्य करने, जिसमें वर्ग-विद्वेष की भावना भड़के या राजद्रोह की भावना पनपे, से अलग रहने के लिए वचन देना ऐसा था, जिसे कोई भी दे सकता था और किसी को भी देना चाहिए। जैसा कि उस समय इगित किया गया था, "प्रत्येक अग्रेज पर प्रतिबंध है कि वह पैनल संहिता के अन्तर्गत अपराधों को न करें।" सुब्रह्मण्यम अय्यर केवल इसके लिए सहमत हुए थे कि वह जनकल्याण विरोधी कार्यो मे शामिल नही होगे। वह जानते थे कि पहले की भाति अब उनके लिए इधर-उधर जाना, जन सभाओं का आयोजन करना और उन्हे सबोधित करना सभव न होगा। दूसरी बात यह थी कि सुब्रह्मण्यम अय्यर सदैव इसका ध्यान रखते थे कि उनके कार्य, चाहे उसका कोई भी रूप क्यों न हो, राजद्रोह-विरोधी कानून के विरोध मे नहीं हो सकते

न हो होने चाहिए। यदि वह स्वस्थ होते और बिना किसी पर निर्भर हुए अपने शरीर की देखरेख करने मे समर्थ होते, तो वह अपने मामले पर आगे बहस होने देते। सरकार ने सुब्रह्मण्यम अय्यर को उच्च न्यायालय के सितम्बर के आपराधिक सत्र के समापन के तुरत बाद कैद कर लिया था, जिसके परिणामस्वरूप यदि वह अभियोग को चुनौती देते, उन्हे वास्तविक ट्रायल शुरू होने से पहले 6 माह जेल मे रहने हेतु स्वय को तैयार करना पडता। उन्हे जमानत पर रिहा करने से भी इन्कार कर दिया गया था और उतनी लम्बी अवधि तक कारावास का जीवन बिताना ऐसे व्यक्ति के लिए जो, "तिल-तिल कर मर रहा हो," ये वी० कृष्णस्वामी अय्यर के शब्द है, जो उस समय कहे जब वह अभियोग वापस लेने के सरकार के निर्णय के पश्चात जेल में उनसे मिलने गये, एक क्रूर आदर्श होता।

जेल से छूटने के दो दिन बाद से ही उनकी दृष्टि मंद पड़नी शुरू हो गई, किन्तु एक साथ आई इन मुसीबतो के होते हुए भी सुब्रह्मण्यम अय्यर ने कभी एक क्षण के लिए भी नहीं सोचा कि उन्हे सार्वजनिक जीवन मे सक्रिय भाग लेने से निवृत हो जाना चाहिए, जबकी अस्वस्थ होने तक उन्होने कई सार्वजनिक सभाओं मे भाषण दिये। अंतत भीषण बीमारी ने उन्हे इन कार्यों से निवृत होने को विवश किया। ध्यान देने योग्य बात है कि मद्रास प्रेसीडेंसी के बाहर के किसी आलोचक ने मद्रास मे प्रारम्भ किये गये औद्योगिक उद्यमो की, विशेषकर स्वदेशी स्टीम नेविगेशन कम्पनी की कड़े शब्दों में निन्दा की, तो वह उससे अच्छी तरह निपटे। जेल से छूटने के तुरंत बाद उन्होंने यह प्रदर्शित किया कि उनका लेखन-कार्य छोड़ने का कोई इरादा नहीं है।

जब तक सुब्रह्मण्यम अय्यर के अंदर शक्ति बनी रही, 'स्वदेशमित्रन' के लिए वह सम्पादकीय लिखते रहे। के० सुब्बाराव के भाई के० व्यासराव, जिन्होंने 'हिन्दू' के सम्पादकीय स्टाफ मे काम किया था और स्वयं मद्रास मे लगनशील सार्वजनिक कार्यकर्ताओ में से एक थे, सुब्रह्मण्यम अय्यर के कार्य के बारे मे मार्मिक विवरण छोड़ गये है। 'भारत मे जनमत निर्माण' लेख मे व्यासराव कहते हैं :–

"कुछ सप्ताह पहले जब मैं उनसे एक शाम के समय मिलने गया, तो वह उसे बड़े ध्यान से सुनते रहे, जिसे उन्हें पढ़कर सुनाया जा रहा

था, उस समय वह मुझे अपराजित मानव इच्छा के रूप मे दिखाई दिये। उनके आंखो को ज्योति इतनी मद पड़ गई थी कि वह अपने सामने खड़े व्यक्ति को भी नही देख पाते थे, किन्तु भारतीय एव ससार की सर्वाधिक जटिल राजनीति के प्रति उनकी अंतर्दृष्टि एकदम साफ थी और उन्होने कहा, "जैसे मुझे सबसे साधारण बात वह बता सकते थे, वह हर सुबह तमिल दैनिक 'स्वदेशमित्रन' के लिए मुख्यलेख लिखाते है।" जब मैं उनसे विदा ले रहा था तो उन्होने कहा, "यदि मैं उनके पास शाम को जल्दी न आता।" फिर उन्होंने कहा, "मैं सुबह व्यस्त ही नहीं अति व्यस्त रहता हूं। उस व्यक्ति को देख लिया जिसे मैंने देखा, उनसे सुन लिया, जो मैंने सुना। मैं मानता हू कि यह मेरे लिए स्तभित करने वाला आश्चर्य था। किन्तु तत्काल ही मैंने समझ लिया कि यह व्यक्ति रक्त मास से कही अधिक है, अंगों और हाथ-पैर से कहीं और बढकर है। इसकी श्रेष्ठतम शक्ति उसका आत्मबल है। यह उस अभेद्य अस्तित्व का भाव है, जो शरीर को चेतन बनाये रखता है।"

जिस समय सुब्रह्मण्यम अय्यर अत्यंत रुग्ण दशा मे पड़े थे, महात्मा गांधी उनसे मिलने गये। 1915 मे गाधीजी मद्रास मे थे। उन्होने वी० एस० श्रीनिवास शास्त्री को अपने साथ लिया। शास्त्री ने उन दोनो की भेंट का मार्मिक गद्यशैली मे वर्णन किया—एक पीढ़ी दूसरी पीढ़ी को अलविदा कर रही थी। नि:संदेह दक्षिण अफ्रीका सत्याग्रह आदोलन प्रारभ करने के कारण गांधीजी सारे ससार में ख्याति प्राप्त कर चुके थे, किन्तु भारत की स्वतंत्रता प्राप्त करने के लिए उन्हे योजना तैयार करनी थी। गाधीजी के समान ही उस समय सुब्रह्मण्यम अय्यर ने भारत को ब्रिटिश राष्ट्रमंडल का पूर्ण सदस्य बनाने के लिए काम किया था। गाधीजी किसी से भी अधिक अच्छी तरह जानते थे कि सुब्रह्मण्यम अय्यर ने राष्ट्रहित के लिए कितना बड़ा त्याग किया है। उन्होने दक्षिण अफ्रीका के भारतीयो के कल्याण के लिए भारतवासियो को एकजुट करने में सुब्रह्मण्यम अय्यर से सहयोग प्राप्त किया था। रोगों से जीर्ण सुब्रह्मण्यम गांधीजी के सामने रो पडे और उन्होंने बताया कि अब वह जन सेवा में सक्रिय भाग लेने में असमर्थ हो गये है, तो गाधीजी ने उनके आसू पोंछे और कहा कि वह भारत के लिए अपनी शक्ति से अधिक काम कर चुके हैं। अत: अब उन्हे

अपने शरीर को आराम देना चाहिए। अब जन सेवा करने का दायित्व दूसरे लोगो पर है।

यह जानकर संतोष होता है कि मद्रास नगर का दौरा करने वाले प्रमुख राजनैतिक नेताओ ने इस रुग्ण देशभक्त से मिलने जाना अपना प्रमुख कार्य समझा। अपने द्वारा प्रचार किये गये हिन्दू शास्त्रो के कतिपय अनुवादो के सबंध में ऐनी बेसेंट सुब्रह्मण्यम अय्यर से अक्सर मिलने जाती थीं।

7—4 M of I & B/84

देश-विदेश से श्रद्धांजलि

जी० सुब्रह्मण्यम अय्यर का निधन 15 अप्रैल, 1916 को 61 वर्ष की आयु में हुआ। कुष्ठ रोग से हुई उनकी मृत्यु ने उस समय राजनैतिक धरातल पर रिक्तता पैदा की। देश के विभिन्न कोनों से आये लोगो ने उन्हें श्रद्धांजलि अर्पित की। उनमे दादाभाई नौरोजी ओर सुरेन्द्रनाथ बनर्जी जैसे महान नेताओ से लेकर गाव के साधारण स्कूल मास्टर तक शामिल हुए। दिवगत नेता को उस नैसर्गिक श्रद्धांजलि का एकमात्र कारण था—उनकी निर्भीक चेतना, जिसने परिणामो की चिंता किये बिना जनकल्याण के लिए कार्य किया, यदि वह थोड़ा-सा कम आलोचक और कम औपचारिक होते, तो उन्हें भी विशिष्ट वर्ग का सम्माननीय पद मिलता। ऐसी अभिलाषा न रखने के कारण ही वह सर्वसाधारण जनता के अत्यत प्रिय बन गये।

1916 मे हुए भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के अधिवेशन मे कांग्रेस के इस परम सम्माननीय दिवगत सदस्य को श्रद्धांजलि अर्पित की गई। स्वागत समिति के अध्यक्ष जगतनारायण ने सुब्रह्मण्यम अय्यर को, "भारतीय पत्रकारिता का जनक" कहा, जिन्होंने जानकारी से भरपूर निर्भीक लेखन द्वारा सजग जनमत के निर्माण और वृद्धि में अपना अमूल्य योगदान दिया। सुब्रह्मण्यम अय्यर, "हमारे हृदय की श्रद्धा के शक्तिस्तभ थे।"

लखनऊ अधिवेशन के अध्यक्ष पद से बोलते हुए अम्बिका चरण मजूमदार ने कहा कि सुब्रह्मण्यम अय्यर के रूप मे उन्होने अपने देश के एक ऐसे महान व्यक्ति को खो दिया जो, "हमारे बहादुर साथियों मे से एक थे, जिनके अदर अनुपम राष्ट्रभक्ति, आत्म बलिदान की भावना, कर्त्तव्य-परायणता विद्यमान थी। इनसे भी बढ़कर उनके अंदर कार्य करने की असाधारण क्षमता थी।" उन्होने आगे कहा, "यह सुब्रह्मण्यम अय्यर ही थे जिन्होंने भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का सर्वप्रथम प्रस्ताव रखकर कांग्रेस की भूमि को जोता और उसमे प्रथम बीजारोपण किया। अत उन्हे आधुनिक भारत का निर्माता कहना उचित ही है।"

मद्रास मे हुई शोक सभा मे शोक प्रस्ताव रखते हुए करूणाकरन मेनन, जो बाद मे सुब्रह्मण्यम अय्यर के स्थान पर 'हिन्दू' के सम्पादक बने, ने कहा कि उनके नेता देशवासियो के सर्वाधिक सम्मान, कृतज्ञता एव श्रद्धांजलि के पात्र है, क्योंकि उन्होंने दक्षिण भारत मे जनमत और जनजीवन के विकास में सहयोग दिया। 'हिन्दू' के माध्यम से उन्होंने जनता के अन्दर सजीवता तथा बल का सचार किया और जनजीवन को स्थिर रूप प्रदान किया और वह 'हिन्दू' के प्रणेता व मार्गदर्शक थे. वह आगे कहते गये— अपने यौवनकाल मे हम 'हिन्दू' मे प्रकाशित लेखो को पढकर रोमान्चित हो उठते थे। यदि सारी दुनिया ने एक बात कही हो और 'हिन्दू' ने बिल्कुल उसके विपरीत बात कही हो, तो हम 'हिन्दू' पर ही विश्वास करते और उसी का पक्ष लेते तथा उसी के विचारो का अनुसरण करते। कुछ पुराने भारतीय अधिकारियो द्वारा की जाने वाली कटु आलोचना के बावजूद हिन्दू' ने भारतीय जनता को अपने साथ बनाये रखा। वह (सुब्रह्मण्यम अय्यर) साहस व दृढ सकल्प से युक्त देशभक्ति मे उत्सुकता और उत्साह रखते थे, किन्तु लेखन-कार्य में मर्यादित एव नरम रुख अपनाते थे। वह सरकार की कठिनाई को अच्छी तरह समझते थे, किन्तु अनुचित कार्यो को सहन नहीं कर सकते थे। वह लोगो की चारित्रिक दुर्बलता को कभी भी प्रश्रय नही देते थे।

अपनी पुस्तक 'विद्रोह के बाद भारतीय राजनीति में' सुब्रह्मण्यम अय्यर के बारे मे सी० वाई० चितामणि कहते है, "उन्होंने मद्रास के लिए 'हिन्दू' के माध्यम से बहुत कुछ किया, किन्तु काग्रेस तथा महाजन सभा के माध्यम से मद्रास के लिए वही किया जो सुरेन्द्रनाथ बनर्जी और मोतीलाल घोष ने बंगाल के लिए और तिलक व गोखले ने बम्बई (अब महाराष्ट्र राज्य) के लिए किया। वह अपनी पीढ़ी के सबसे महान पत्रकार थे।"

'हिन्दू' के जयती अक मे इसके प्रवर्तक को अपनी श्रद्धाजलि अर्पित करते हुए चितामणि ने कहा, "सुब्रामण्य ने 'हिन्दू' को बनाया तथा 'हिन्दू' ने सुब्रह्मण्यम अय्यर को। वह 20 वर्ष तक इसके सम्पादक रहे। उन्होने इसे मद्रास मे एक सस्थान एव शक्ति के रूप में स्थापित किया। वह हमेशा वही लिखते थे, जिसकी उन्हे

पूर्ण जानकारी होती थी। वह हमेशा दृढतापूर्वक लिखते थे। वह अपनी सुदृढ़शक्ति एव दुर्बलता मे जैसे थे, उन्हे वैसा ही मानियें। पत्रकारिता और सार्वजनिक जीवन के वर्ष क्रमानुसार लिखे इतिहास मे उनका नाम ऐसे विख्यात व्यक्ति के रूप मे जीवित रहेगा, जो निरतर मातृभूमि की सेवा मे लीन रहा और जिसने उस सेवा मे योग्यता व परिश्रम, साहस व अध्य-व्यवसाय, आस्था व दृढ संकल्प जैसे गुणो का समावेश किया। वह ऐसे व्यक्ति थे, जिनका आजीवन सम्मान होता रहा और मृत्यु के उपरात भी उन्हे भुलाना कठिन है। वह श्रोताओं का ध्यान बरबस अपनी ओर आकृष्ट कर लेते थे, जिससे सभी उनकी प्रशंसा करते थे। ऐसा व्यक्ति हम सब से सम्मान पाने योग्य है। पत्रकारिता की गतिविधियों के संचालक के साथ-साथ वह एक राजनैतिक संस्था के सगठनकर्ता एवं महान समाज सुधारक भी थे। मुझे प्रसन्नता है कि मेरा मित्र समाज सुधारक था। जो वह कहते, वही करते थे।

"अवश्य ही सुब्रह्मण्यम अय्यर जैसा महसूस करते, वैसा ही बोलते। जैसा बोलते वैसा ही लिखते थे और जैसा लिखते व बोलते, वैसा ही व्यवहार मे लाते थे। उनके जैसा कर्तव्यनिष्ठ, इच्छा शक्ति, तथा समस्याओ की सीधी पकड़ करने वाले की आज भी हमे अधिक जरूरत है।

परिशिष्ट-1

जी० सुब्रह्मण्यम अय्यर द्वारा "हर हाइनेस द महारानी सरनोमोई, मेम्बर आफ द इम्पीरियल आर्डर आफ द क्राउन आफ इंडिया", कासिम बाजार को 11 नवम्बर, 1885 मे लिखा पत्र अनेक दृष्टि से रोचक व पठनीय है। इससे विदित होता है कि 'हिन्दू' के सम्पादक को इसके लिए धन जुटाने की ओर भी ध्यान देना पड़ता था। सम्पादक को अपने पत्र स्वयं ही लिखने-पडते थे, क्योंकि उस समय आधुनिक सुविधाएं-अच्छे आशुलिपिक और टाइपिस्ट भारतीय व्यापार के क्षेत्र में अभी नही आये थे। इस पत्र से उन दिनों के सामान्य प्रचलन का भी बोध होता है। लोग पत्रो के साथ रुपयो के नोट भेजने मे इसलिए संकोच करते थे कि कही नोट बर्बाद न हो जाये। वह एक पत्र के साथ आधे नोट भेजते। इसे अधिक अच्छा समझते थे और पाने वाले से उनके मिलने की सूचना की प्रतीक्षा करते थे और तब अन्य आधे नोट भेजते थे।

नीचे सुब्रह्मण्यम अय्यर का पत्र दिया जाता है।

हिन्दू कार्यालय और राष्ट्रीय प्रेस,
माउंट मार्ग, मद्रास,
11 नवम्बर, 1885

सं० 526

सम्माननीय महोदय,

'हिन्दू' पत्र के वर्ष 1885 का आपके द्वारा भेजे चंदे के 15 रुपये के आधे नोट के पाने की सूचना धन्यवादपूर्वक भेज रहा हूं और आपसे अनुरोध है कि दूसरा आधा भी आप यथाशीघ्र भेजने की कृपा करें।

जी० सुब्रह्मण्यम अय्यर
सम्पादक

परिशिष्ट-2

20 सितम्बर, 1978 को 'हिन्दू' के प्रथम अक मे लिखा गया सम्पादकीय निम्नलिखित है :-

पत्रकार समुदाय के बीच काफी समय से प्रचलित शिष्टाचार के अनुसार नये सदस्य के रूप में प्रवेश चाहने की इच्छा से एक नेता द्वारा इसके प्रकाशन के निमित्त जनता के सामने "हम स्वय" नुमायशी ढग से आ रहे है। इसमें हम उन परिस्थितियो का उल्लेख करेंगे, जिनके परिणामस्वरूप इस नये पत्र का प्रकाशन करना पड़ा। साथ ही इस पत्र का स्वीकृति अभिप्राय व उद्देश्य, प्रस्तावित नीति जिसका अनुसरण किया जाना है और इसके मार्गदर्शक सिधातों की भी चर्चा करेंगे। अत्यंत सकोच के साथ इस पत्र को अस्तित्व मे ला रहे है। हमे विश्वास है कि अनेक कमियो के होने पर भी दयालु जनता अपने समर्थन एव प्रोत्साहन द्वारा हमारा हार्दिक स्वागत करेगी। फिर भी विश्वास नही होता, क्योंकि हमारे इस प्रयास के समान ही अन्य अनेक प्रयासो को हमने दुर्भाग्यवश असफल होते देखा है। अविश्वास की यह भावना हम पर अधिक उत्तरदायित्व डाल देती है, क्योंकि हम देखते है कि इस क्षेत्र मे हमारे पूर्वाधिकारी अधिक अनुभवी एवं उच्च गुण समपन्न थे, किन्तु हमारी विनम्र सम्पति में उनके करुण अत का कारण उनकी व्यक्तिगत कमिया थीं और जनता उनके प्रयासों को प्रोत्साहन देने को तत्पर न थी। विगत कुछ वर्षो मे परिस्थितियों ने हमारे समाज के हर पहलू मे भारी परिवर्तन ला दिया है। ये परिवर्तन इतनी तीव्रता से आये है कि छोटे मोटे अतरालो के बाद इस तरह के प्रयासो का औचित्य सिद्ध हो जाता है। जब हम श्रेष्ठ और ख्याति प्राप्त सफल समाचार पत्रो पर दृष्टिपात करते है, तो विदित होता है कि ये पत्र एक ओर तो जनता की आवश्यकताओं, कष्टों व भावनाओं की वकालत करते है। दूसरी ओर शासन सत्ता का सम्मान व प्रतिष्ठा बड़े उत्साह से करते है। साथ ही यह खेदजनक तथ्य भी सामने आता है कि एक-आध अपवाद को छोड़कर उनमें या तो सभी अनिच्छुक यूरोपीय हैं या उद्यमी यूरोपीय। हम यह कहने की अनुमति

चाहते हैं कि दक्षिण भारत के प्रमुख नगरों में एक-से-अधिक स्वदेशी समाचार पत्रों के लिए स्थान भी है और आवश्यकता भी । आशा है, जनता हमें दु:खी मनुष्यों की धृष्टता के लिए क्षमा करेगी, क्योंकि जनता की प्रगति में रुकावट डालने वाली सबसे बड़ी कमियों में से एक संगठित जनभावना की कमी है। हम इस विचार से सहमत नहीं है कि शिक्षित हिन्दू दोषरहित है । दूसरी ओर सोचने और बोलने का यह छिद्रान्वेषी तरीका भी असंगत है, जिसमें पढ़े-लिखे हिन्दुओं में दोष ही ढूढ़े जाते हैं। जनमत के अभाव के कारण ही यह स्थिति उत्पन्न हुई है और हमारे पास सुसंचालित स्वदेशी समाचार पत्र नहीं है, जिससे जनता अपने विचारों को नियमित कर सके। समाचार पत्र जनभावना को ही प्रदर्शित नहीं करते, अपितु उसको बदलते और ढालते भी है। इसी आवश्यकता को पूरा करने का काम हमने हाथों में लिया है। हमारे तथाकथित शिक्षित वर्ग का दायित्व है कि वे जहां तक व्यावहारिक हो, शासक और शासित के बीच की खाई को भरने का प्रयास करे । हम इसे महसूस करते हैं और हम अपनी भावनाओं के प्रति न्याय करने के लिए प्रयत्नशील हैं ।

जहां तक संभव हो, हम अपने आपको भारतीय राजनीति तक ही सीमित रखेंगे । हम उस वर्ग के व्यक्तियों से संबंधित नहीं हैं, जो पाश्चात्य शासन की श्रेष्ठता को नहीं मानते तथा सरकार के हर कार्य में दोष ही ढूढ़ते है और न ही उस वर्ग से संबंधित है, जो अंग्रेजी शिक्षा के प्रभाव में इतने आगे बढ़ गये हैं कि वे स्वदेश की हरेक वस्तु की निंदा करते है और स्वदेश की अपेक्षा वरीयतः पाश्चात्य संस्थाओं की वकालत करते हैं।

अनेक एंग्लोइंडियन राजनीतिज्ञों जैसे सर टी० मुनरो, सर एच० लारेंस, तथा कई अन्यों के इस विचार से हम भी सहमत है कि हमारे देश के शासकों की देश के आतंरिक प्रशासन में अत्यधिक हस्तक्षेप करने की प्रवृत्ति बनी हुई है । भारत की भौतिक प्रगति में जितनी समरूपता लाने की अपेक्षा है, हम परम्परावादी होने को कृत संकल्प है । सारे संसार का मार्गदर्शन यूरोप द्वारा होना निश्चित है । इसलिए पाश्चात्य ज्ञान व सभ्यता के फैलाव से डाले गये यूरोपीय प्रभाव के दबाव का प्रतिरोध करना चाहिए। यदि हमारे लिए संभव भी हो, तो भी वाछनीय नही होगा । निष्पक्षता और न्या

वे सिद्धात हैं, जिनका हमारा मार्गदर्शन करना है। हमारा ध्येय हमेशा शाति और एकता बनाए रखना होगा और हम अपने देशवासियों की भावनाओ की सही व्याख्या करेंगे तथा शासक व शासित के बीच पारस्परिक विश्वास की भावना पैदा करेंगे । धर्म मे यद्यपि मिशनरियों के किसी विशिष्ट संप्रदाय के आचरण पर संदेह और मलिन भावनाए देखने के अवसर आते है, किन्तु हम सख्त तटस्थता अपनाएंगे। हम अपने पत्र के स्तम्भो मे साम्प्रदायिक झगडों की बातों को कभी भी छापने की अनुमति नही देंगे। किन्तु जब धार्मिक प्रश्न राजनैतिक तथा सामाजिक स्वरूप के हितो से सबधित होते है, तो हम किसी भी विवेकपूर्ण और उचित आलोचना हेतु अपने स्तभ खुला रखेंगे। इस प्रकार हमने अपने बारे मे विवरण देने का साहस किया है। हम उन कठिनाइयो और उत्तरदायित्वों से भलीभाति परिचित हैं, जो एक समाचार पत्र के सचालक को निभानी होती है, किन्तु हम इस कार्य के लिए स्वयं को इतना अनुपयुक्त समझते है कि हमारे पास इस क्षमा-याचना के अलावा अन्य कोई तर्क नही रह जाता कि हमने इतने बड़े महत्वपूर्ण कार्य को इसलिए अपने हाथों मे लिया है कि इसने हमे ऐसा प्रयास करने के लिए ललचाया है । यदि हमारे प्रयास सफल हो जाते है, तो हम स्वयं बधाई के पात्र होंगे और गौरव का अनुभव करेंगे कि हम उस कार्य में सफल हुए, जिसे हम अपना कर्तव्य समझते है। यदि जनता के प्रोत्साहन व सहयोग के अभाव मे हमारे प्रयत्न अपने पूर्व पुरुषों के अज्ञात भारत का अनुसरण करते है, तो हम इस क्षेत्र से उदासीन होकर हट जाएंगे और समझेंगे कि दक्षिण भारत की जनता अपनी भूमि पर एक से अधिक स्वदेशी समाचार पत्र का समर्थन करने को तैयार नही है और जनता से इस बात के लिए क्षमा मागेंगे कि हमने उनकी शाति भग की ।

परिशिष्ट-3

'हिन्दू' पत्र के 23 अगस्त, 1894 के सम्पादकीय का लगभग पूरा पत्र नीचे उद्धृत किया गया है। इससे सुब्रह्मण्यम अय्यर की तार्किक शक्ति का परिचय मिलता है। उन्होंने भारत स्थित ब्रिटिश स्वामित्व के समाचार-पत्रों के सम्पादकों का कड़ा मुकाबला करके अनुपम उदाहरण प्रस्तुत किया जिसे 'हिन्दू' के इतिहास मे एस० रंगास्वामी, जो बाद मे एक शानदार अल्पावधि के लिए सम्पादक पद पर प्रतिष्ठित रहे, ने सजीवता एवं सफलता प्रदान की, सम्पादकीय स्वत: स्पष्ट है —

पायोनियर को धन्यवाद–डॉ० स्मिथ का मामला अब जनता के सामने है। हमें अब पता चला कि अयोग्य अधिकारी ने क्या किया और क्या नहीं किया। उसने अपनी अतिथि महिला से चुम्बन की इच्छा प्रकट की, जिसके न मिलने पर अपना सर्जिकल हाथ उसकी कमर मे डालने की अनुमति मागी, किन्तु उसकी दोनो इच्छाएं अतृप्त रह गईं। पायो-नियर का सोचना है कि यदि मद्रास सरकार ऐसे प्रत्येक अधिकारी को, जिसने कभी किसी महिला से चुबन करने की इच्छा प्रकट की हो, और उसे प्राप्त न कर सका हो, सेवामुक्त करने लगे, तो इससे सेना-स्थापना में आश्चर्यजनक कमी आ जाएगी। एंग्लोइंडियन अधिकारी, उन्हें सुन्दर लगने वाली किसी भी रूपवती महिला का चुम्बन करना अपना विशेष अधिकार मानते है। यदि घटना घट ही गई है, तो यही उपयुक्त अवसर है कि मद्रास सरकार लम्बे समय से परेशान पतियो के हित मे ऐसी घटनाओं को रोक दे। पायोनियर ने अन्य प्रांतो मे स्थित सेना स्थापनाओ के बारे में कुछ नहीं कहा है। इससे स्पष्ट है कि बौद्धिक रूप से पिछड़े इस प्रांत को छोड़कर एक सैनिक अधिकारी अन्यत्र किसी महिला से चुबन की अनुमति मागता है और वस्तुत. उसे पा लेता, तो बात वहीं समाप्त हो जाती है। बम्बई गजट में भी इस पर मार्मिक टिप्पणी दी गई है, "इस घटना मे डॉक्टर को एक चुम्बन भी न मिल सका" ऐसा अनुमान लगाना ठीक न होगा कि ऐसा हुआ होगा या नहीं'

किन्तु हर व्यक्ति के समान सरकार का भी कर्तव्य है कि वह अंग्रेज अधिकारियों के ऐसे या इसी जैसे अन्य आचरणो का प्रतिरोध करे, जिनमे वे रूपवती महिलाओं के अधरों का चुम्बन सदैव चुम्बनमात्र के लिए करते है.

हम किसी ऐसे इरादे को भी नही मानते है, जो डॉ० स्मिथ या अन्य किसी कर्मचारी या गैर कर्मचारी को अपराधी ठहराने या रिहाई से पहले, यदि अपेक्षित हो, सुनवाई या जनता के बीच सुनवाई के मार्ग मे रुकावट डालता है । हम उस निर्दोष अभागी महिला की खुली अदालत के बीच होनेवाली पूछताछ के समय होनेवाली करुण स्थिति से परिचित है, जिसमें कुछ ही भारतीय या अंग्रेज महिलाए ऐसी होंगी, जिन्हे ऐसे आचरणों से कोई आपत्ति नहीं होगी, किन्तु अब सामत युग नहीं रहा। वह बहुत पहले समाप्त हो गया है और डॉ० स्मिथ के मामले पर खुली अदालत मे पूछताछ के लिए हम आवश्यक समझते है, यद्यपि इससे उस महिला की भावनाओ को एक बार फिर चोट पहुचेगी, यदि पायोनियर की बात सही है, जिसका उसने पहले ही ऐसी माग करके अपमान किया।

इस घटना के विषय मे हम बताना उचित समझते है कि यह पूर्णत मद्रास सरकार और पायोनियर के बीच की ही बात नहीं है, बाहर से ध्यान रखने वाली जनता की भी इसमे रुचि है । हमे विश्वास नही कि बिना महान गुणों के कोई राष्ट्र महान बन सकता है । ब्रिटिश समाज के नीचे से ऊपर पारिवारिक ढाचे के संबध मे पायोनियर मे हल्के रूप में लिखे लेख, जिस पर जनता विश्वास कर सकती है, मे से आधी भी सच होतीं तो, हमें विश्वास है, ब्रिटिश साम्राज्य का विशाल ढाचा बहुत पहले रेत के महल की भाति ढहकर धूल मे मिल जाता। बहुत-सी बाते, जिन्हे पायोनियर कह सकता है या कर सकता है, मद्रास सरकार नहीं कर सकती। इलाहाबाद का 'पत्र' हलके तौर पर इसे देश की जनता को अपने नैतिक चरित्र को बनाए रखने की सच्ची अभिलाषा को प्रकट करता है, किन्तु मद्रास सरकार इग्लैंड की जनता और दूसरी ओर भारत की जनता के प्रति उत्तरदायी होने के कारण इनमे से किसी के प्रति भी ऐसे अपमानजनक ढंग से व्यवहार नहीं करेगी, जैसा कि हमारे एक समकालीन ने किया। निस्संदेह, मद्रास सरकार कठिन स्थिति मे है।

फिर भी आशा है कि सरकार द्वारा जन सेवकों के नैतिक स्तरों को ऊपर उठाने के लिए किये गये किसी भी प्रयास को भारतीय जन भावना का समर्थन मिलेगा ।

महारानी की स्वीकृति प्राप्त होने पर भारतीय चिकित्सा सेवा के सर्जन मेजर एफ० सी० स्मिथ को 9 अक्तूबर 1894 को पद त्याग करने की अनुमति दे दी गई ।

परिशिष्ट-4

'हिन्दू' ने अपने 31 मई 1897 के अक मे जी० सुब्रह्मण्यम अय्यर के उस पत्र का निम्नलिखित अंश छापा, जिसे उन्होने लदन से भेजा था, जहा वह वेलबाई आयोग के सम्मुख गवाही दे रहे थे।

264, चेरिंग क्रास होटल
लदन
7 मई, 1897

मैं अभी भी अपनी गवाही पर क्रियाशील हू। जितना ही अधिक मैं अध्ययन करता हू, उतनी ही अधिक सामग्री मुझे लिखने को मिल जाती है। मैं समाचारपत्रो को नही पढ सका हू और इधर-उधर अधिक सैर करने भी नही जा पाया हूं। शाम के समय मैं अवश्य बाहर जाकर सैर करता हू। यहा शाम के समय घूमना आनददायक और शक्तिवर्धक व्यायाम है। यहां घूमने से थकावट नही होती, चाहे कोई कितना ही घूम ले। एक या दो मील की सैर यहा कोई बग्धी मे नही करता। हर आदमी बडी तेजी से चलता है। तुम यहा एक भी ऐसा व्यक्ति पुरुष या महिला नही पाओगे जो सुस्ती से चलता हो, जैसा कि हम प्राय: अपने कुछ जवानों को मद्रास मे समुद्र तट पर चलते देखते है। जब तक तुम फुर्ती से नहीं चलोगे, तुम्हे आवश्यक गर्मी नही मिलेगी। तेज चलने के लिए ठडा मौसम प्रेरित करता है। एक अग्रेज नौजवान जब एक घटे का भी खाली समय पाता है, तो वह पढने या ताश खेलने की जगह इधर-उधर साइकिल चलाने, घूमने या कुछ अन्य प्रकार के व्यायाम करने निकल जाता है। यहां जगह-जगह पर रेस्तरां है और अनेक लोग घर की अपेक्षा यही पर भोजन करते है।

सोमवार को मैं इम्पीरियल सस्थान में राष्ट्रीय भारतीय एसोशिएसन की सभा मे गया। बम्बई के न्यायाधीश जार्डिन (सेवानिवृत) ने "भारत मे वर्तमान विचार और भावनाए" लेख पढ़ा। यह नीरस और अरुचिकर

लेख था, जिसमें एंग्लोइंडियन व भारतीयो के मध्य सबधों के प्रति आशा-वादी दृष्टिकोण व्यक्त किया गया था। वह पहले के उस वर्ग का प्रतिनिधित्व कर रहे थे, जो वस्तुत. अपनी सहयोगी भारतीय जनता के प्रति मित्रता की भावना रखता है। अन्य बातो के अलावा उन्होने वह उदाहरण दिया, जिसके अनुसार बम्बई मे प्लेग के दौरान अंग्रेजों ने सेवा कार्य किया। सभा के अध्यक्ष लार्ड हाबमैस ने वक्ता को धन्यवाद देने का प्रस्ताव रखा। तत्पश्चात गोखले ने धन्यवाद प्रस्ताव का अनुमोदन किया। श्री वाचा और मै वहां उपस्थित थे। श्री वाचा यूरोपीय पोशाक में थे और नगे सिर बैठे थे। श्री गोखले ने अपनी मराठी पीली पगडी पहनी और मैंने अपनी सफेद पगड़ी। हरेक व्यक्ति हम दोनो को घूर कर देख रहा था। श्री गोखले ने मिस्टर जार्डिन के विचारो का खडन किया और कहा कि दोनो समुदायो के बीच वैसा मित्रभाव नही रह गया है, जैसा कुछ वर्ष पहले था और बताया कि शिक्षित भारतीयो की राजनैतिक रियायतें संबधी शिकायत के कारण ही यह परिवर्तन आया है। मैंने अध्यक्ष के द्वारा रखे गये धन्यवाद प्रस्ताव का अनुमोदन किया और मिस मेन्निग के जोर देने पर कि मैं इस विषय पर कुछ बोलू, मैंने गोखले के विचारों का दृढ़तापूर्वक समर्थन किया और कहा कि बढ़ती हुई गलतफहमी उच्च अधिकारी वर्ग के कारण उतनी नही, जितनी कि एंग्लोइडियनों के निचले वर्ग के कर्मचारियो -खास कर व्यापारिक कर्मो के सहायको, खेत के मालिकों और उन सौभाग्य प्राप्ति की खोज मे रहने वाले वर्ग के लोगों, जिनकी सख्या निरतर बढती जा रही है, के कारण उत्पन्न हुई है। मैंने अपने पूर्ववक्ता कलकत्ता की श्रीमती स्टील के वक्तव्य की चर्चा की, जिसमें उन्होने जनता की स्थिति को सुधारने की आवश्यकता पर बल दिया था और बताया था कि शिक्षित भारतीय ही अपेक्षाकृत शासन व शासित के बीच की कड़ी को जोड़ सकते हैं और उसका सही समाधान देश की सरकार मे इन वर्गों की प्रभावशाली आवाज को स्थान देना है। इसी बीच एक एंग्लोईडियन बम्बई गजट के सम्वाददाता ने व्यवस्था का प्रश्न उठाया और कहा कि बहस सामाजिक की अपेक्षा अधिक राजनैतिक बनती जा रही है, फिर भी अध्यक्ष ने मुझे आगे बोलते रहने की अनुमति दी। मैंने अंग्रेजों द्वारा भारत की प्रगति हेतु किये गये कार्यों के लिए उनके प्रति कृतज्ञता और भारतीय जनता की अत्यधिक गहरी राजभक्ति को प्रदर्शित करते हुए अपना भाषण समाप्त

किया। उस दिन दोपहर मैं इंडिया आफिस गया, जहा मैं जानकारी हेतु कुछ पुस्तकें खोजना चाहता था। मैं सर चार्ल्स बर्नाड, सर फिलिप हट्चिस और चार्ल्स टर्नर से मिला। वे सभी उदार व शिष्ट थे। उन्होंने मद्रास के बारे में बहुत कुछ पूछा। सर चार्ल्स बर्नाड ने मुझसे बार-बार पूछा कि मद्रास की जल-व्यवस्था सुधारने के लिए अभी तक कुछ भी क्यो नहीं किया गया। वह सोचते हैं कि जल-व्यवस्था असतोषजनक है और वहा पानी अस्वास्थ्यकर है। मैंने उनकी अतिम बात स्वीकार की और बताया कि रेड हिल्स लेक में 6 वर्ष तक सप्लाई करने के लिए पानी विद्यमान है और शहर के कुछ भागों में पानी पहुचाने हेतु काम करने की आवश्यकता है, जिसे नगरपालिका कर भी रही है। सर फिलिप हट्चिस तथा सर चार्ल्स टर्नर दोनों ने ही कहा कि मिस्टर जस्टिस पारकर की कौंसिल में नियुक्ति का विरोध करके उन्होंने बड़ी गलती की, क्योंकि उस समय न्यायिक प्रशिक्षण एवं अनुभव प्राप्त व्यक्ति को कौंसिल में रखना अत्यंत लाभदायक होता। हट्चिस के विचार से यदि कौंसिल में एक न्यायविद् व्यक्ति हो, तो चौथे सदस्य की आवश्यकता नहीं पडती। वहां दो ऐसे सिविलियन कौंसिलओं मे मुश्किल से मतैक्य होगा और जब गवर्नर उनसे सहमत न हो तो आवश्यकता पड़ने पर वह प्रस्ताव को अस्वीकार कर सकता है।

बुधवार को मैं फिर इंडिया आफिस गया और तीन घंटे से भी अधिक समय तक नोट्स लेता रहा। कल हमने ब्रिटिश कांग्रेस समिति की एक महत्वपूर्ण बैठक की और सुबह 11 बजे से शाम 6.30 बजे तक हम काम करते रहे। इसमे यूरोपीय सदस्य सर विलियम वेडरबर्न, मिस्टर ह्यूम और मि० गुडरिज उपस्थित थे और सभी भारतीय सदस्य वहा विद्यमान थे। बैठक का मुख्य कार्य था—जयती के उपलक्ष्य में महारानी को भारतीय जनता की ओर से दिये जाने वाले बधाई भाषण का प्रारूप तैयार करना। इस भाषण की प्रति सभवत आज शाम महाजन सभा के सचिव को भेज दी जाएगी।

भाषण में महारानी को बधाई देते हुए इस महान अवसर पर एक विशेष वरदान प्रदान करने का अनुरोध किया गया है। इसमे चार उपहार मागे गये है। वे हैं—विधान परिषदों का विस्तार, आई० सी० एस० की

एकसाथ परीक्षा आयोजित करने के संबंध मे हाउस आफ कामंस के प्रस्ताव को लागू करना, स्थायी बंदोबस्त को लागू करना और भारतीय मामलों पर सांविधिक जांच की पहले जैसी पद्धति को पुनर्जीवित करना । भाषण में इस तथ्य की ओर विशेष ध्यान आकर्षित किया गया है कि ब्रिटेन और उसके उप-निवेश समृद्धशाली और खुशहाल हैं, अकेला भारत ही दुखी और निराश है और इसमें महारानी का अपनी भारतीय जनता के प्रति सुविदित प्यार भरा दुलार और राजभक्त भारतीय जनता की उनके प्रति बढती हुई कृतज्ञता का भी इस अनुपम अवसर पर उल्लेख किया गया है ।

परिशिष्ट-5

21 सितम्बर, 1903 को 'हिन्दू' के रजत-जयंती समारोह के अवसर पर जी० सुब्रह्मण्यम अय्यर के द्वारा दिये गये भाषण का मूल पाठ नीचे दिया जाता है :

देवियों और सज्जनो,

मैं सम्माननीय श्री आनन्द चार्लू को हार्दिक धन्यवाद देता हूं, जिन्होंने मेरा हार्दिक अभिनंदन किया और वी०राघवचारियर के साथ मेरे नाम का मार्मिक शब्दो मे उल्लेख किया। यह अवसर मेरे लिए दुख और खुशी की मिलीजुली भावना से भरा है। मुझे दुख इस बात का है कि अब मैं दक्षिण भारत की जनता के प्रधान पत्र को सचालित करने के गौरवशाली पद पर नही हू और उस पद पर नहीं हू, जिसने मुझे देश के कल्याण के लिए सेवा का अनुपम अवसर व व्यापक क्षेत्र प्रदान किया। प्रसन्नता है कि जिस छोटे से बीज को मैंने अन्य साथियों के साथ मिलकर 25 वर्ष पहले बोया था, अकुरित होकर अब बड़ा हो गया है और पेड के समान फैल गया है तथा देश की अधिकाश जनता का विश्वास एव स्नेहभाजन बन गया है। शायद इस तथ्य को पूरी तरह नहीं समझा जाता है कि इस देश मे प्रेस के कार्य और उत्तरदायित्व पश्चिमी देशों के 'प्रेस' के समान नही, है और यह अंतर आज की विशिष्ट परिस्थितियों में, विशेषत. 'हिन्दू' के आविर्भाव और उन्नति के दौरान अधिक बढ़ गया है। इसके अधिक गंभीर तथा महत्व के कार्य है—जनमत का निर्माण, जनमत की शिक्षा और उन्हें जनता की भलाई एवं प्रगति की दिशा मे अग्रसर करना। भारतीय प्रेस के इन दायित्वो का ज्ञान 'हिन्दू' पत्र के कार्यकाल मे ही हुआ।

'हिन्दू' पत्र उस समय शुरू किया गया जब देश की राजनीतिक स्थितियों मे नैसर्गिक वृद्धि के दौरान, अनेक परिस्थितियों के मेल से जनता की गतिविधियों का युग प्रारम्भ हुआ। यह उस युग चेतना के साथ एक रूप हो गया। इन दोनों में नैसर्गिक सहानुभूति व सहयोग होने के कारण इसे शानदार सफलता मिली। 'हिन्दू' का कर्त्तव्य था इसे प्रतिबिंबित करने के

लिए जनमत का निर्माण करना और इससे, जो तब ढलने की अवस्था मे थी, सहयोग लेना । 'हिन्दू' का यह विशेष सौभाग्य रहा कि उसके अब तक के कार्यकाल मे उसे सदैव जनता का हार्दिक एवं पूर्ण सहयोग पाने मे सफलता मिलती रही । उन व्यक्तियों से भी ऐसा ही सहयोग मिला जिन पर अपना कठोर कर्तव्य निभाने के दौरान विवश होकर आरोप लगाने पड़े थे, यहा तक कि उन लोगों से भी मदद मिली, जिनकी सरकारी सेवा पर इसके द्वारा बुरा प्रभाव पड़ा था, क्योंकि हम उन्हे और साथ ही जनता को भी यह समझाने मे सफल हो गये थे कि हमने कार्य किया। केवल समाज की भलाई के लिए 'हिन्दू' का विगत जीवन जितना रोचक बना रहा, उतना ही उसका भविष्य गंभीर कठिनाइयों तथा उत्तरा-दायित्वों से भरा है । जब मैं 'हिन्दू' कहता हू, तब मैं इसका उल्लेख सम्पूर्णत. भारतीय प्रेस के प्रतिनिधि के रूप में करता हू । इन 25 वर्षो के दौरान अब तक भारतीय प्रेस कठिन सघर्ष करने मे लगा रहा । मैं कह सकता हूं कि जब से लार्ड लिट्टन ने वाइसराय व गवर्नर जनरल का कार्यभार संभाला, तभी से यह सघर्ष जारी है, किन्तु भारतीय प्रेस का भविष्य और भी कठिन बनता जाएगा । दुर्भाग्यवश, इस देश मे जन-सेवा के सारे कार्य का भार प्रेस को ही वहन करना पड़ता है । जितनी अधिक जन-चेतना बढ़गी, उतनी ही सार्वजनिक कार्यों के गुण-दोष परखने की आवश्यकता होगी । इस तरह इसकी जिम्मेदारियां अधिक बढ जाएगी और यह स्पष्ट है कि जसे-जसे जनता का बौद्धिक स्तर बढता है, जनता के शिक्षित वर्ग की संख्या और प्रभाव मे वृद्धि होती जाती है, वैसे-वैसे ही शासक और शासित के पारस्परिक सहयोग की भावना में कमी आना स्वाभाविक है और सरकार द्वारा किये जाने वाले कार्यों की पहले की अपेक्षा आलोचना और अधिक प्रभावशाली समालोचना होने लगगी । देवियो और सज्जनो, जब तक सरकार जनमत के प्रति वर्तमान रुख अपनाये रहेगी उनको स्वीकृत संवैधानिक प्रतिष्ठा प्रदान नही करेगी और जनता के प्रति-निधियो को अपने विश्वास मे लेने से इन्कार करेगी । तब तक यह दुर्भाग्य पूर्ण गलतफहमी बनी रहेगी, जब एक बार जनता और सरकार के बीच का अंतर मिट जाएगा और जनता को संवैधानिक प्रतिष्ठा प्रदान की जाने लगेगी । तब संभवतः यह पत्र विपक्ष में खड़ा होने, जैसाकि प्रायः कहा

जाता है, की अपेक्षा सरकार का समर्थन करने लगेगा, इसलिए राजनैतिक विषयों के संबंध में पत्र का भविष्य अत्यंत गंभीर है ।

किन्तु केवल राजनीतिक विषयों के संबंध में ही नहीं, जब तक मैं पत्र का सम्पादक रहा, प्रत्येक घटना पर 'हिन्दू' की यह नीति कभी नहीं रही । हमारी अपनी सामाजिक अक्षमताओं के संबंध में मैंने कभी भी अपने उत्तरदायित्व को कम करके नहीं आंका । जब मेरे पास 'हिन्दू' के सम्पादन का प्रबंध था या अब जब मैं जनमत के अन्य क्षेत्रों में काम कर रहा हूं । मैं सदैव देश के जनमत का प्रतिनिधित्व करने वाली जिम्मेदारियों के प्रति सदैव सजग रहा हूं, ताकि सामाजिक बुराइयों तथा सरकार द्वारा की जानेवाली भूलों को साहस व निष्ठापूर्वक सुधारने की आवश्यकता पर बल दिया जा सके । भारतीय पत्र, इस समय देश भर में फैलती हुई प्रतिक्रियावादी भावना के हानिकारक व धोखे से भरे प्रभाव और जिसे कृत्रिम देशभक्ति के धोखे में मार्गच्युत किया जा रहा है, के प्रति अपनी आंखें बन्द नहीं कर सकते । हमें उन बदलती हुई परिस्थितियों को ध्यान में रखना चाहिए, जिनसे हमारा देश गुजर रहा है । आइए, याद करें कि कोई भी समाज जो समृद्धि की अवस्था प्राप्त कर पीछे लौटे और उसमें जीवित रहे। ऐसे ही तर्कसंगत नहीं, जैसे कोई वृद्ध अपने बचपन को फिर से प्राप्त कर उसमें जीना चाहे। राष्ट्र विगत के लिए उतना जीवित नहीं रहता, जितना भविष्य के लिए । यद्यपि मैं बीते समय और आगे आने वाले समय की ऐतिहासिक तारतम्यता से इन्कार नहीं करता हूं । प्रेस एवं अन्य जनमत का समर्थन करने वाले मेरे देशवासियों को यह तथ्य हमेशा ध्यान में रखना चाहिए कि विगत इतना महत्वपूर्ण नहीं, जितना कि वर्तमान और वर्तमान उतना आवश्यक नहीं, जितना कि भविष्य । समाज भूतकाल के लिए उतना जीवित नहीं रहता, जितना कि भविष्य के लिए। इसलिए मैं आपसे निवेदन करता हूं और चाहता हूं कि 'हिन्दू' अपने आरंभकाल से अपनायी गई अपनी नीति से न भटके और न केवल राजनैतिक हालातों, अपितु सामाजिक व भौतिक प्रगति के सभी क्षेत्रों की वकालत एवं नेतृत्व करे। परिवर्तन, सुधार और उन्नति किसी राष्ट्र के जीवन का निर्माण करते हैं, जबकि विचारहीन व दृष्टिहीन अनुदारवाद गतिहीनता लाते हैं और अन्तत: विनाश की स्थिति में पहुंचा देते हैं जब तक लोग देश की वर्तमान वास्तविक नाजुक

प्रकृति का मूल्य नहीं समझेंगे, तब तक हमारे बीच गतिहीनता की शक्तियों का खतरा बना रहेगा। इसलिए हमारे देश मे जनचेतना के प्रतिनिधि के रूप में केवल पत्र ही होने के कारण हमारे और सचालकों के लिए आवश्यक हो गया है कि इस सामान्य पहलू, कार्यों व कर्तव्यों के साथ-साथ राजनैतिक प्रगति से सबधित तथा प्रतिबंधित बातों पर विशेष ध्यान देना।

मैं एक बार फिर श्री आनन्द चार्लू को उनके उन शब्दों के लिए धन्यवाद देता हूं, जिनमे उन्होंने इस पत्र के साथ मेरा नाम जोड़ा है।

परिशिष्ट-6

28 दिसम्बर, 1914 को 'हिन्दू' को भेजे गये संदेश में जी० सुब्रह्मण्यम अय्यर ने लिखा :

कल मद्रास को, भारत में जब से ब्रिटिश संसद शासन कर रही है, तब से अब तक के लोकप्रिय, बुद्धिमान वाइसरायों में से एक वाइसराय मार्क्विस रिपन की प्रतिमा को स्थापित करने की अनुपम प्रतिष्ठा प्राप्त होगी । किसी भी अन्य भारतीय नगर चाहे वह कलकत्ता हो या बम्बई, से वाइसराय के नाम को इस विशेष प्रकार से प्रतिष्ठित करने के लिए नही चुना गया। यद्यपि उन्हें वहा या भारत के अन्य भागों मे मद्रास से कम सम्मान या प्यार नही मिला। भारत के प्रत्येक दूसरे गवर्नर-जनरल की प्रतिमा कलकत्ता में स्थापित की गई है । लेफ्टिनैंट गवर्नर कमाण्डर-इन-चीफ जैसे निचले पदों के लोगो के स्मारक इसी प्रकार स्थापित किये गये है। लॉर्ड रिपन ने अपने प्रशासन के अंत मे 'भूधारण' विधेयक लाकर जमीदारों की नाराजगी मोल ले ली थी। उस विधेयक का लक्ष्य जमीदारों के अनाधिकार के विरुद्ध किसानों के अधिकारों को बनाये रखना था। इससे जमीदार इतने नाराज हो गये कि उन्होंने सबसे योग्य वाइसराय की प्रतिमा स्थापित करने के लिए किये जाने वाले प्रयासों में कोई भाग नही लिया और इस तरह अपने हितों पर हुए काल्पनिक चोट का बदला ले लिया और देश के धनी वर्ग के प्रतिनिधि के रूप में स्पष्टत: अपने कर्तव्य को निभाने से इन्कार कर दिया । बम्बई में श्री दादाभाई नौरोजी और अन्य लोगों ने लॉर्ड रिपन के नाम से एक प्रशिक्षण सस्थान स्थापित करने का प्रयत्न किया, यद्यपि अपेक्षतया एक छोटा-सा संस्थान स्थापित किया गया, किन्तु उसे स्वर्गीय महारानी विक्टोरिया के नाम से स्थापित एक विस्तृत सस्थान के साथ मिला दिया गया। इस प्रकार साम्राज्य के दो प्रमुख नगरों द्वारा उस सम्माननीय नाम के यादगार के प्रति अपना कर्तव्य न निभा पाने के पश्चात मद्रास आगे आया और उसने अपनी सीमाओं के भीतर प्रतिमा स्थापित करने का निश्चय किया और साम्राज्य के अन्य नगरो को इस राष्ट्रीय कर्तव्य को निभाने के लिए प्रेरित करना

शुरू किया। इस लक्ष्य को पूरा करने के लिए कलकत्ता मे कुछ धन इकट्ठा कर स्वर्गीय डब्लु० सी० बनर्जी के हाथों सौंप दिया गया, किन्तु यह धन मद्रास को उपलब्ध कराने में कुछ कानूनी कठिनाइयां होने और दूसरे शहरों द्वारा इच्छुक न होने या अपना सहयोग देने के लिए तैयार न होने के फलस्वरूप प्रतिमा स्थापित करने में कुछ संकोच के बाद मद्रास ने निश्चय कर लिया कि इसका श्रेय उसी को मिलना चाहिए और प्रतिमा उसी की सीमा के भीतर किसी प्रसिद्ध स्थान पर लगानी चाहिए।

1903 मे जब भारतीय कांग्रेस का अधिवेशन मद्रास मे हुआ तो स्वागत समिति के अध्यक्ष सम्माननीय नवाब सैय्यद मुहम्मद बहादुर ने सभी कांग्रेसजनों तथा भारतीय जनता से सहयोग देने व अपने इस राष्ट्रीय कर्त्तव्य के दायित्व को पूरा करने की अपील की। उस वर्ष कांग्रेस ने जो धन इकट्ठा किया था, उसमे से 5000/- रुपये इस प्रयोजन के लिए अलग रख दिये। उस पर मिले ब्याज तथा अन्य उपाहार से प्राप्त कुल 17,000/- रुपये उस समय उपलब्ध थे, जब हमारे हमेशा से रहे शुभाकांक्षी मित्र सर विलियम वेड्डरबर्न के माध्यम से एक अंग्रेज कलाकार को प्रतिमा बनाने के लिए कहा गया। कल (29-12-1914) को 8 बजे उदारवादी दल के प्रमुख सदस्य माननीय पेटलैंड की अध्यक्षता मे विजयनगर के महाराजा के फव्वारे के निकट मद्रास के सर्वाधिक व्यस्त मार्ग में से एक माउंट रोड पर मार्क्विस रिपन की प्रतिमा का अनावरण समारोह सम्पन्न होगा।

स्वर्गीय मार्क्विस उदारवादी दल के पुराने सम्माननीय व विश्वसनीय सदस्य थे, जिसका उन्होंने मृत्युपर्यंत हाउस ऑफ लार्ड्स मे नेतृत्व किया और अपने लम्बे सार्वजनिक जीवन काल में उन्होंने अनेक अवसरों पर इसे महत्वपूर्ण सेवाएं अर्पित की। हमे पूर्ण विश्वास है कि लॉर्ड पेटलैंड उस महानुभाव, जिसके शत्रु 'न' के बराबर थे, की प्रशंसा और दयालुता के बारे में बहुत कुछ करना चाहेंगे।

स्वर्गीय मार्क्विस रिपन ने भारतीय जनता की सेवा के जो कार्य किये, उनके विषय में यहां अधिक कहने की आवश्यकता नही है। उनके प्रशासन काल के अंतिम समय 1884 मे एंग्लोइंडियनों की प्रतिक्रिया

एवं विरोध के होते हुए भी भारतीय जनता की न्यायिक माग की पुष्टि की गई । उनके पूर्वाधिकारी के समय मे वैधानिक भारतीय सिविल सर्विस की स्थापना हुई, जिसने एग्लोइडियन राजतन्त्र के कठोर शरीर में छेद कर दिया और लॉर्ड रिपन के प्रशासन ने इस छिद्र को अधिक चौडा कर दिया तथा सरकारी सेवा में भारतीयों का प्रवेश सभव बना दिया, जिससे एग्लोइंडियन समुदाय और अधिक चिढ गया और उसके वाइसराय के उस निष्ठावान प्रशासन के विरुद्ध कुत्सित जेहाद छेड दिया । यद्यपि इल्बर्ट विधेयक आन्दोलन का परिणाम जनता को सतुष्ट न कर सका, फिर भी उससे एक सामूहिक ध्येय के लिए जनता को संगठित करने एव उसमे सामूहिक अधिकारों व दावों के लिए चेतना जागृत करने की आशा से अधिक लाभ मिला। इस तरह कहा जा सकता है कि मार्क्विस रिपन भारत की चेतना के सृजनकर्ता थे, भारतीय जनता के कल्याण के लिए उनके द्वारा उठाये गये बुद्धिमत्तापूर्ण व हितकारी कदमों में से यह सर्वश्रेष्ठ कदम था, "समस्त भारत में वास्तविक स्वायत्त शासन की व्यवस्था स्थापित करने के लिए लाया गया विधेयक," ताकि जनता के राजनैतिक जीवन का ठोस आधार बन सके । वह पहले ब्रिटिश भारतीय राजनीतिज्ञ थे, जिन्होंने ब्रिटिश शासन की प्रगतिशील नीति के परिणामस्वरूप सार्वजनिक रूप से इस देश की जनता के राजनैतिक उत्थान की आवश्यकता तथा बुद्धिमता को स्वीकार किया । इस उत्थान-कार्य को अच्छे परिणाम प्राप्त करने हेतु अपेक्षतया सरल और उत्पादक बनाने के लिए उन्होंने अद्वितीय व दूरदर्शितापूर्वक विस्तृत क्षेत्र में स्वायत शासन-व्यवस्था की आधारशिला रखी, जिससे सार्वजनिक मामलों के प्रबन्ध में लोगों को उनके उत्तरदायित्वों का प्रशिक्षण मिले । लार्ड रिपन ने यदि कोई भी कार्य न किया होता, तो भी उनका नाम हमारी शाश्वत कृतज्ञता के योग्य होता ।

अपने प्रशासन के चौथे साल के अंत में सेवानिवृत हुए और देश के विभिन्न भागो से अनेक प्रतिनिधि मंडल उन्हे विदाई देने बम्बई पहुंचे। मद्रास नगर और सेलम से भी एक शिष्टमंडल उनसे मिलने गया। सेलम से शिष्टमडल उन्हे इस बात के लिए धन्यवाद देने गया था कि सेलम के तथाकथित विद्रोहियो के प्रति मद्रास सरकार द्वारा किये गये कठोर व्यवहार के विरुद्ध चलकर, उन्होंने विद्रोहियों के साथ नरमी का बर्ताव किया ।

मद्रास से जो लोग गये थे, वे अभी भी जीवित है । वे हैं सर एस० सुब्रह्मण्यम अय्यर, श्री त्यागराज चेट्टियर, मि० इथिराजुलु नायडू और श्री जी० सुब्रह्मण्यम अय्यर, सेलम से जाने वालों में हम केवल सम्माननीय श्री सी० विजयराघवचारियर को ही याद कर सकते है। जो लोग उस समय बम्बई मे थे, वे उस घनी भीड को कभी नही भूलेगे जो बम्बई की गली-गली और आम रास्तों मे भरी हुई थी । अतुलित उत्साह की भावना कई रूपों में प्रदर्शित हो रही थी और शिक्षित वर्ग एव जनसाधारण आशा व स्फूर्ति से प्रफुलित हो रहे थे। वस्तुत इस सेवानिवृत वाइसराय ने जो प्रगतिशील कार्य किये थे, उनका प्रदर्शन कलकत्ता से लेकर बम्बई तक जनता के व्यापक उल्लास द्वारा हो रहा था जो इतना अद्वितीय, अभूतपूर्व एव महान था कि एक प्रतिक्रियावादी नौकरशाह सर ऑकलैंड कोल्विन, जो उस समय संयुक्त प्रात का लेफ्टिनेन्ट गवर्नर था, ने एक लेख मे कहा था, "यदि यह सच है, तो इसका अर्थ क्या है ?" और फिर प्रश्न बनाकर स्वय ही उत्तर दिया कि यदि यह कुछ अर्थ रखता है, तो वह है भारतीय जनता की नवचेतना जागृत होना, जिसने ब्रिटिश भारतीय प्रशासन की पुरानी प्रणाली मे सुधार करना आवश्यक कर दिया ।

मद्रास के शिष्टमडल ने लार्ड रिपन से फोटो खिचवाने के लिए बैठने का अनुरोध किया, तो उन्होने अपनी नैसर्गिक दयालुता के साथ अनुमति प्रदान कर दी । स्वर्गीय श्री आर० रघुनाथराव, जो मद्रास शिष्ट-मडल में से एक थे और जिन्हें लॉर्ड रिपन इंदौर के दीवान के रूप मे जानते थे, ने सेवानिवृत्त वाइसराय से पूछा कि क्या वह एक वर्ष और ठहर कर अपना कार्यकाल पूरा नही कर सकते ? तो उन्होने उत्तर दिया, "ठीक है, श्रीमान रघुनाथराव, यदि मैं यह समझता कि मैं एक वर्ष और रहकर भारत का कुछ भला कर सकूंगा, तो मैं खुशी से रुक सकता था ।" टोरी सरकार ने उसी समय सत्ता प्राप्त की थी और ब्रिटिश प्रशासन के सबसे उपयोगी और कल्याणकारी अध्याय की समाप्ति हो गई थी। सेवानिवृत्ति के उपरांत भी भारत की भलाई मे जीवनपर्यंत उनकी रुचि बनी रही, यह बात इस तथ्य से प्रकट होती है कि लार्ड मैकाले ने लार्ड रिपन के परामर्श से लाभ उठाकर भारत में [illegible] ही मे अनेक सुधार शुरू किये है और लॉर्ड मॉर्ले ने वाइसराय को विकेन्द्रीकरण

पर भेजे अपने संदेश म लॉर्ड रिपन के 'स्थानीय स्वायत्त सरकार' पर रखे गये स्मरणीय प्रस्ताव का उल्लेख किया । हम सामान्य लोग लार्ड रिपन के परिचायक स्मारक के लिए प्रयास करने की दिशा मे ऊंचे दावो पर उचित ध्यान देने के कारण ही रुके रहे। यह वास्तव मे खेद की बात है, विशेषतया दृष्टिकोण से। यदि कुछ वर्ष पूर्व धारण कर लेता, जैसा इसने मरणोपरात सम्मान के रूप में धारण किया है, तो यह उस वृद्ध सत्य-निष्ठ महानुभाव, जो सत्तर वर्ष से अधिक जीवित रहे, के दिल को उल्लास से भर देता ।

MGIPCBE—S4—4 M of I&B/84—11-7-86—2,000.